RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2025-27
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

गौतम बुद्ध

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर

मार्च-2025 | वर्ष - 17 | अंक : 02 | मूल्य : 5/-

संत कबीर दास | संत रविदास जी | घासीदास | बिरसामुण्डा | पेरियार रामास्वामी | छत्रपति शाहूजी महाराज | सन्त गाडगे | महात्मा ज्योतिबा राव फुले | नारायण गुरु | सावित्री बाई फुले | कांशीराम

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (सहा.अभि. जलकल विभाग), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.), मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल) मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख -
रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल :
राजकुमार, उन्नाव
मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख
रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001,
मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक
पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020
IFSC CODE-SBIN0001784

संघर्ष के बिना अधिकार नहीं -कांशीराम

(सासनी)

6 नवम्बर, 1983 को डी-एस4 का आगरा मण्डलीय सम्मेलन, सासनी (अलीगढ़) में आयोजित किया गया था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता बामसेफ व डी-एस4 के अध्यक्ष मा. कांशीराम जी ने की। लगभग 1 हजार साईकिल मार्च करते हुए कार्यकर्ताओं के साथ-साथ 7 हजार लोगों ने भाग लिया। सासनी कार्यक्रम की एक विशेषता यह रही कि उत्तर प्रदेश में पहली बार जिला अलीगढ़ की दलित-शोषित जनता ने डी-एस4 के अध्यक्ष मा. कांशीराम जी को इस सम्मेलन में सिक्कों से तोला, जिसका कुल योग 11625 रूपये बना।

मा. कांशीराम जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि इस छोटे से कस्बे में कितनी शान्तिपूर्वक व धैर्य से बैठे हुए लोग हमारे मिशन की भावना को सुनना चाहते हैं। सासनी क्षेत्र में यह बड़ा प्रोग्राम पहली बार हो रहा है और यहाँ के कार्यकर्ताओं ने बताया कि यह प्रोग्राम और भी बड़ा होता, परन्तु दीवाली पर्व के बाद तीसरे दिन भैया दूज का त्यौहार है। मुझे यह देखकर खुशी हुई कि इसके बावजूद भारी जनता एकत्रित हुई है। आज भी हम लोग मनुवादी विचारधारा में फंसे हुए हैं। जो लोग दोहरी नीति अपनाते हैं वे भटक जाते हैं। आज मैं देख रहा हूँ कि यहाँ पर वे ही लोग आये हैं जोकि अम्बेडकरवादी विचारधारा के हैं। यहाँ पर सासनी क्षेत्र की जनता उतनी नहीं है जितनी कि बाहर की है।

हम इस मिशन को बना रहे हैं और उसे बड़ा रहे हैं। इस कम समय में पूरी मिशन की जानकारी देना मुश्किल है। प्रत्येक कार्यकर्ता को इस मिशन की पूरी जानकारी रखनी है और उसे रखनी चाहिए। जो हमारे मिशन में आना चाहते हैं वे हमारे कैडर कैम्प अटेण्ड करें क्योंकि उन्हें उसमें मिशन को विस्तृत जानकारी दी जाती है और जिनकी शंकायें होती हैं उन्हें दूर किया जाता है। हमारे कार्यकर्ता बिना किसी शंका के पूरी तरह समझ कर आगे आयें। प्रत्येक कार्यकर्ता की जिम्मेदारी है कि वे इस मिशन को बनाने की और आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी गहराई से लें और जनता में पूरी लगन के साथ कार्य करें। मैं मिशन की जानकारी उन कार्यकर्ताओं को विस्तार से देता हूँ जो पहले से ही मिशन की जानकारी रखते हैं। जो नये लोग जानकारी नहीं रखते वे पुराने कार्यकर्ताओं से पहले जानकारी प्राप्त करें।

आपने डी-एस4 की परिभाषा का विश्लेषण करते हुए बताया कि दलित-शोषित का यह एक शक्तिशाली संगठन है। यह संगठन अपने ही ऊपर निर्भर रहकर चलाया जाने वाला संगठन है। यह संगठन संघर्ष करने के लिए बनाया गया है क्योंकि बिना संघर्ष के हम अधिकार प्राप्त नहीं कर सकते। यह संगठन समाज की जरूरतों को पूरा करने के लिए बनाया है। इसी उद्देश्य से डी-एस4 की विचारधारा को देश के प्रत्येक क्षेत्र में फैलाया गया है। संगठन को मजबूत करने के लिए देश में जाल बिछाया गया है। हमारी कमजोरी की वजह से ही हमारे ऊपर जुल्म होते हैं। इसी कमजोरी को दूर करने के लिए हम सारे देश में दलित समाज की जड़ों को मजबूत करें। इस कार्य को हमने 15 अगस्त 1983 से शुरू किया है और 15 अगस्त 1984 तक देश के आधे भाग को मजबूत करना चाहते हैं, साथ ही हम अन्याय-मुक्त क्षेत्रों का निर्माण करना चाहते हैं।

दलित-शोषित समाज : साधनहीन समाज

सासनी जिला अलीगढ़ में मुझे सिक्कों से तोला गया। इन सिक्कों का वजन जो कि 11625 रूपये होता है, दिया गया तथा जिन बच्चों ने इस मिशन को जो दान दिया वह हमारे लिए खुशी की बात है। हम साधनहीन लोग हैं हमारे पास साधन नहीं है। इस समाज के लिए जितनी कामयाबी होनी चाहिए थी वह नहीं हो पाई। उसके कई कारण थे जिसमें एक कारण साधनहीनता है। इसलिए हम अपने साधन स्वयं जुटायें। जो साधन हमारे पास उपलब्ध हैं। दुश्मन तो यह चाहेगा कि वह हमारे लोगों की आदतें खराब करे और हमारा यह कर्तव्य है कि हम उससे बचें। हम अपनें ही साधन ढूँढ़ें और जो तौर-तरीका साधन जुटाने का ढूँढ़ा है कि हमारे और दो पहिए, वह अच्छा है। इससे आगरा व उसके आस-पास के लोगों को सबक लेना चाहिए। हमें वही साधन जुटाने चाहिए जो हमारे अपने हैं।

अधिकतर लोग अपने साधनों साईकिलों से आये हैं। अगर आज हमारे साथी बसों आदि पर निर्भर रहते तो शायद यहाँ तक नहीं आ सकते थे। अतः हमारे अपने साधन-दो पैर और दो पहिए, वह अच्छा है। इससे आगरा व उसके आस-पास के लोगों को सबक लेना चाहिए। हमें वही साधन जुटाने चाहिए जो हमारे अपने हैं।

अंत में आपने अपने भाषण में एक कहावत का महत्व समझाते हुए बताया कि जैसे लोग होते हैं वैसे ही नेता मिल जाते हैं और जैसे नेता होते हैं वैसे ही उन्हें लोग मिल जाते हैं। हमें न बिकने वाला समाज बनाना है और न बिकने वाला नेता। जो कुछ करना नहीं चाहते है उन्हें छोड़ें और जो कुछ करना चाहते हैं वे कुछ करने की कोशिश करें। मुझे यह देखकर प्रसन्नता है कि हमारा समाज नेताओं से पहले सुधर रहा है जो अच्छी बात है। पुनः दोहराते हुए कहा कि हमें न बिकने वाला समाज तैयार करना है और न बिकने वाला समाज तैयार करना है और न बिकने वाले नेता।

इस सम्मेलन का संचालन टेक चन्द राव, संयोजक डी-एस4 सासनी (अलीगढ़) ने किया। सम्मेलन में के.एम. लाल.एड. (एटा), एम.ए. रईस (बामसेफ संयोजक मैनपुरी), रघुवीर सिंह राही (अलीगढ़), रामकिशन अशोकायन एड. (आगरा), आर.के.चौधरी एड. (फैजाबाद), रमेश चन्द रत्न एड. (हाथरस), डी. सी. वीरेन्दु (जालौन), गंगाराम (मथुरा), कु. स्नेहलता (अलीगढ़), देवकान्ता राव (दिल्ली), सादिक नबाज खाँ (पू. विधायक, फर्रूखाबाद) ने सम्बोधित किया तथा चन्द्रसुमन ने कविता पाठ किया। रघुवीर सिंह गौतम की सुपुत्री कु. सुधा ने मा. कांशीराम जी को गुल्लकदानी भेंट की।

(बहुजन संगठक, वर्ष 4, अंक 36, 12 दिसम्बर, 1983)

साभार :
मा. कांशीराम साहब
के ऐतिहासिक भाषण खण्ड-2
पेज संख्या 225 से 227 तक
ए. आर. अकेला

सामाजिक–विषमता कैसे समाप्त हो?

सामाजिक विषमता समाप्त होने से मेरा तात्पर्य है, कि ब्राह्मण और भंगी के बीच का मौजूदा अन्तर समाप्त होकर आपस में समानता युक्त भाई चारे का जीवन व्यतीत करते हुये प्राप्त स्वतन्त्रता का सम्मलित लाभ उठावें।

सामाजिक अपमान गरीबी से अधिक खटकता है।

पेरियार ललई सिंह कानपुर

सामाजिक विषमता कैसे दूर हो?

डा० भीमराव रामजीराव अम्बेडकर ने जांत– पांति तोड़क मण्डल लाहौर के सन् 1936 ई० के वार्षिक सम्मेलन के लिए तैयार किए गए भाषण (एन्हीलेसन साफ कास्ट अर्थात जाति भेद का उच्छेद) में कहा था, कि:–

जाति–भेद को नष्ट करने के लिए काम करने की दूसरी पद्धति यह कही जाती है कि पहले अन्तरवर्णीय आरम्भ किये जायें मेरी राय मे यह उपाय भी अल्प है। अनेक जातियां ऐसी हैं जिनमें सहभोज जाति भेद के भाव को और जाति भेद की चेतना को मारने में सफल नहीं हुआ।

मेरा विश्वास है कि वास्तविक उपाय अन्तरवर्णीय विवाह है केवल रक्त का मिश्रण ही स्वजन और मित्र ढोने का भाव पैदा कर सकता है। जब तक मित्र होने एवं भाई बन्धु होने का भाव प्रधान नहीं होता तब तक जाति भेद द्वारा उत्पन्न किया हुआ वियोजन भाव पर या होने का भी कभी दूर न होगा। अन्तर्जातीय विवाह को हिन्दुओं के सामाजिक जीवन में जितना प्रबल साधन होने की आवश्यकता है उतनी अहिन्दुओं के सामाजिक जीवन में नहीं। जहां समाज पहले ही दूसरे बन्धनों से आपस में खूब ओत प्रोत हो वहां विवाह जीवन टुकड़ें हो रहा हो वहा इकट्ठा करने वाली शक्ति के रूप में विवाह एक अनिवार्य आवश्यकता की बात हो जाती। इसके सिवा और कोई भी बात जाति भेद को मिटाने का काम नहीं दे सकती की एक साधारण सी घटना होती है।

आपके जाति–पाँत तोड़क मण्डल ने आक्रमण की यही रीति ग्रहण की है। यह सीधा और सामने से आक्रमण है। इस रोग के ठीक निदान के लिए मण्डल धन्यवाद का पात्र है। उसने हिन्दुओं को उनकी सच्ची खराबी बताने का साहस किया है। सामाजिक उत्पीड़न की तुलना में राजनैतिक उत्पीड़न कुछ भी नहीं। जो सुधारक समाज को ललकारता है वह गवर्नमेण्ट का विरोध करने वाले राजनैतिक से कहीं अधिक निर्भीक है। जांति–पांत तोड़क मण्डल का कहना ठीक ही है कि अन्तरवर्णीय सहभोजों और जाति पांत तोड़क विवाहों का आम विराज हो जाने पर ही जाति भेद का जोर टूटेगा। आपने रोग का कारण ढूढ़ लिया है परन्तु अब विचारणीय विषय यह है कि इस रोग के लिए ठीक इलाज क्या है? क्या कारण है, कि हिन्दुओं की एक बड़ी संख्या जाति–पांति तोड़ कर रोटी बेटी संबन्ध नहीं करती। क्या कारण है कि आप का आंदोलन सर्वप्रिय नहीं। इस प्रश्न का केवल एक ही उत्तर हो सकता है और वह यह कि जांत पांत तोड़कर रोटी बेटी सम्बन्ध उन विश्वासों और सिद्धांतों को अरूचिकर है जिन्हें हिन्दू पवित्र समझते हैं।

ईटों की दीवार या कांटेदार तार की बाढ़ की तरह जांत पांत कोई स्थूल वस्तु नहीं, जो हिन्दुओं को आपस में मिलने से रोकती है और जिसे गिराने की आवश्यकता हो। जांत पांत एक भावना है, मन की एक अवस्था है। इसलिए जात पात तोड़ने का अर्थ किसी स्थूल रूकावट को नष्ट करना नहीं। इसका अर्थ भावना का बदलना है। जाति भेद बुरा हो सकता है, जाति भेद ऐसा बुरा आचरण करा सकता है जो मनुष्य के प्रति मनुष्य की पाश–विकता कहला सकती है। परन्तु इसके साथ ही यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि हिन्दू जाति भेद को इसलिए नहीं मानते कि वे क्रूर हैं या उनके मस्तिष्क में कुछ विकार हैं। वे जाति भेद के इस लिए पाबन्द हैं, कि उनको धर्म प्राणों से भी प्यारा है जाति भेद को मानने में लोगों को भूल नहीं। भूल उन धर्म ग्रन्थों की है जिन्होंने यह भावना उनमें उत्पन्न की है। यदि यह बात ठीक हो तो जिस शत्रु के साथ आपको लड़ना है, वह जाति भेद को मानने वाले लोग नहीं वरन वे शास्त्र हैं, जो उन्हें इस वर्ण भेद का धर्मों पदेश देते हैं। जाति भेद को तोड़कर रोटी बेटी सम्बन्ध न करने के लिए लोगों की हंसी उड़ाना और आलोचना करना अथवा कभी कभी अन्तरजातीय सहभोज तथा जांत पात तोड़क विवाह कर लेना मनोवांच्छित उद्देश्य की प्राप्ति का एक व्यर्थ साधन है। सच्चा इलाज तो उन शास्त्रों की पवित्रता में लोगों का विश्वास नष्ट करना है। यदि उन शास्त्रों के ऊपर लोगों का विश्वास बचा रहेगा तो आपको सफलता की आशा कैसे हो सकती है? शास्त्रों की प्रमाण मानने में इनकार न करना, उनकी पवित्रता और विधानों में लोगों का विश्वास बना रहने देना और साथ ही उनके कर्म को बिना उपाय वाला व षाशविक बता कर उन्हें दोष देना एवं उनकी आलोचना करना सामाजिक सुधार की एक बहुत ही असंगत रीति है।

जो सुधारक अस्पृश्यता दूर करने का यत्न कर रहे हैं, जिनमें महात्मा गाँधी भी शामिल हैं ऐसा जान पड़ता है, वे इस बात को नहीं समझते कि लोगों के आचरण उन विश्वासों के परिणाम मात्र हैं जो शास्त्रों ने उनके मन में बैठा दिए हैं, लोग तब तक अपने उस आचरण को नहीं बदल सकते जब तक कि उनका विश्वास उन शास्त्रों पर से नष्ट नहीं होता जो उनके आचरण के आधार हैं। इसलिए यदि जांत पांत तोड़क आंदोलनों को अभी तक उतनी सफलता नहीं हुई तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं मालूम होती है, कि आप भी वही भूल कर रहे हैं, जो छूत छात दूर करने वाले अन्य लोग कर रहे हैं। अन्तर्वर्णीय सहभोज व विवाहों के लिए आंदोलन एवं प्रबंध करना किसी के भीतर कृत्रिम उपायों से जबरदस्ती भोजन ठूसने के समान है। प्रत्येक स्त्री और पुरुष को दासता से मुक्त कर दीजिये शास्त्रों पर आश्रित हानिकारक भावनाओं को उनके मन से निकाल डालिये, फिर आप को उन से कुछ कहने की आवश्यकता न रहेगी। वे अपने आप जात पांत तोड़कर खान पान और ब्याह शादी करने लगेंगे।

वाक छल की शरण लेने से कुछ भी लाभ नहीं। लोगों की यह कहने से कुछ लाभ नहीं कि शास्त्र वह बात नहीं कहते, जो तुम विश्वास किये बैठे हो। महत्व ही बात यह नहीं, कि व्याकरण की दृष्टि से पढ़ने या तर्क की दृष्टि से व्याख्या करने पर, शास्त्र क्या कहते है। वरन महत्व की बात यह है, कि लोग शास्त्रों का अर्थ क्या लेते हैं। आप को वही स्थिति ग्रहण करनी चाहिए जो बुद्ध ने ग्रहण की थी। आपको शास्त्रों का केवल परित्याग करने की नहीं वरन बुद्ध व नानक की तरह उनकी प्रामाणिकता वा धर्म ग्रन्थ मानने से इनकार करने की भी आवश्यकता है। आप में इतना साहस होना चाहिए, कि आप हिन्दुओं से कह सकें, कि तुम्हारी सारी खराबी तुम्हारे धर्म के कारण है, उस धर्म के कारण जिसने तुम से जाति भेद की पवित्रता को झूठी भावना उत्पन्न कर रखी है। क्या आप वह साहस दिखलायेंगे?

अस्पृश्यता हिन्दू समाज का ही नहीं समूचे भारत राष्ट्र का कलंक है, इसने करोड़ों मनुष्य प्राणियों से मानवीय प्रतिष्ठा छीन–छानकर उनका जीवन दूभर बना दिया है। इसी के दुःख से करोड़ों हिन्दू मुसलमान और ईसाई बनने के लिए विवश हुए। इसी का दुष्परिणाम भारत की सहस्त्रों वर्ष की विदेशियों की दासता और देश का विभाजन हुआ।

इस अस्पृश्यता की जननी वर्ण व्यवस्था अर्थात जन्म से ही किसी को नीचा समझना है। इस जांत पांत के कारण प्रत्येक हिंदू दूसरे हिन्दू के लिए अछूत हैं। अन्तर केवल अछूतपन के अंश में है, कोई कम अछूत है और कोई ज्यादा। एक के हाथ का बना भोजन तो आप खा लेते हैं परन्तु उसके साथ बेटी व्यवहार नहीं कर सकते। दूसरे को आप स्पर्श कर सकते हैं, परन्तु उसका भोजन नहीं कर सकते। इनके आगे वह हिन्दू आता है, जिसके हाथ का भोजन खाना या पानी पीना तो दूर, जिसे छूने मात्र से आप आप अपने को अपवित्र मानने लगते हैं। तथा कथित अछूत जातियों का कोई व्यक्ति कितना ही विद्वान, कितना ही धनी और कितना ही सचरित्र क्यों न हो, उस पर नीचता और अस्पृश्यता का कलंक नहीं मिटता। हिन्दू समाज में जो प्रतिष्ठा और सम्मान एक दरिद्र, अशिक्षित और मध्यम ब्राह्मण का है, वह एक सम्पन्न, सुशिक्षित सच्चरित्र चमार या भङ्गी का नहीं, रामचरित मानस के रचयिता रामभक्त तुलसीदास जी कह गए हैं :–

पूजिए विप्र शील गुण होना। शूद्र न गुण गण ज्ञान प्रवीना।।

जिस समाज का ऐसा सिद्धान्त हो उस में कौन तथाकथित अछूत रहना पसन्द करेगा। मुझे अभी अभी एक चिट्ठी प्राप्त हुई है। उसे मैं आगे ज्यों की त्यों उद्धृत कर रहा हूं। यह हिन्दू सभा का मुंह बोलता चित्र है।

सन्तराम बी० ए०

आदरणीय पण्डितवयं, विद्या के समुद्र अछूत–शुद्धि के लक्ष्य में लब लीन, श्रेष्ठ गुण–सम्पन्न श्री सन्तराम जी महोदय, आप चिरंजीव भवतु!

आप योग्य की बाड़मेर नगर से वैद्य सन्त परमानन्द निर्वाणी का सादर नमस्ते! मैंने तो आपके जात पांत तोड़क मण्डल चिरकाल से तारीफ सुनी। विक्रम संवत 1981 में जब मैं कराची में था, तब से मैं देखने की इच्छा करता रहा, पर मेरा आना नहीं हुआ। अब अपका श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन के शब्दों से विशेष ध्यान आया, कि आप तो कमर कसकर अछूतपन के गढ़ को गिराने के लिए अपनी विद्वत्ता के शक्तिशाली शब्दों द्वारा सुरगे बिछा रहे हैं, तो मैं भी इस कर्तव्य का इच्छुक होकर बहुत दिन भटकता रहा। मैं छोटी आयु में अपनी जाति से निकल कर विद्वान के संग में रहा। चालिसवें वर्ष में शादी की दो लड़के और दो लड़कियाँ सन्तान है। एक लड़की को हायर सेकेण्डरी प्रशिक्षा बी. एस. टी. डी. सी. साइन्स बाइलोजी, जोधपुर यूनिवसिटी में है। छोटा लड़का तीसरी मे है मकान घर का है। रजि० चिकित्सक हूँ। मेरे विचार कट्टर आर्य समाज के हैं। कोई व्यसन नहीं, घर सारा ही निर्व्यसनी है। चाय शक्कर तक त्याज्य है कट्टर वैष्णव हूँ। मैंने बहुत आर्य समाजी देखें। लेकिन अन्दर जातीयता की बीमारी से तन्दुरूस्त आज तक देखने में कोई नहीं आया। जोधपुर में गत वर्ष लड़का रातानाड़ा आर्य समाज के मन्दिर में किराये पर कमरा लेकर रहता था। वहाँ भी लोग जाति पूछ–पूछ कर तंग करते थे। इस बीमारी से तंग होकर डाक्टर अम्बेदकर बौद्ध बने। मुझे भी लोग इतना ही तंग करते है। मुझे हिन्दुओं की छुआ छूत बावत घृधा है। मैं ऊब गया हूं। अब मुझे भी कुछ बनना पड़ेगा। आप के दरबार की बहुत बड़ाइयां सुनी हैं। तो आप अछूतपन का कलंक मिलाने के लिए कोई इलाज बताओगे। इस उद्देश्य से पत्र लिख रहा हूं। प्रत्युत्तर की इन्तजार में आशा रख कर बैठा हूं।

मैं अछूतों का गुरू हूं। लोग जब देखते हैं तो ईर्ष्या के साथ ये शब्द बोलते हैं कि तुम इतनी सफाई रखते हो, संयमी, चरित्रवान, तथा आदर्शवान हो, व्यसनों से भी अलग हो, रात भोजन भी नहीं करते हो, बाल बच्चे सब सुशिक्षित है तो भी क्या तुम स्वर्ण हो गए? तुम एक ही जन्म में आशा रख बैठे। हिन्दुओं की बराबरी करते हो। मुझे इन शब्दों से अत्यन्त घृणा होती है कि यह क्या धर्म जहाँ मानवता का महत्व ही नहीं। तब कुछ बनने को तैयार हो जाता हूं लेकिन मेरा उसूल रोकता है तब तक सब करूँगा जब तक आपका प्रत्युत्तर नहीं आता और सुख।

आपका–वैद्य सन्त परमानन्द निर्वाणी बाड़मेर (राजस्थान)

जो सवर्ण हिन्दू कहा करते हैं कि अछूत लोग दरिद्रता के कारण मुसलमान और ईसाई बनते हैं उन्हें वैद्य जी ने इस पत्र पर शान्त मन से निष्पक्ष होकर विचार करना चाहिए। एक सुशिक्षित आत्मसम्मानी मनुष्य को उसकी दरिद्रता उतनी नहीं चुभती, जितना कि पग पग पर होने वाला उसका सामाजिक तिरस्कार, हिन्दू समाज की इसी बुराई से मुसलमान और ईसाई लाभ उठा कर अछूतों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ऊपर लिखित पत्र के थोड़े ही दिन बाद मुझे मुसलमानों के अहम दिया मिरजाई संप्रदाय के एक प्रतिष्ठित प्रचारक श्री अब्दुल अबीम का का कादिया से पत्र मिला। उसका कुछ अश आगे दिया जाता है।

सन्तराम बी० ए०

''मुझे यह मालूम करके प्रसन्नता हुई, कि आप अछूत शूद्र हैं सवर्ण हिन्दुओं में से नहीं हैं। अब मैं अपने विचार निडरता से आप के सामने रखता हूँ। हमें इस्लाम व

अहमदियत ने यह शिक्षा दी कि सारी सृष्टि भगवान का परिवार है। मुसलमान का अर्थ शांति व रक्षा चाहने वाला है, कोई मुसलमान तक तक मुसलमान कहलाने का अधिकारी नहीं है जब तक कि वह मानवता के नाते प्रत्येक व्यक्ति से उसी प्रकार से ही प्रेम, प्यार और मेल मिलाप न करे, जिस तरह वह अपनों के साथ करता हैं। मैंने जिस बात को अपने लिए अच्छा समझा है, कि वह चीज मैं अछूतों के लिए आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूं, मैं मानवता के नाते से ही अपने अछूत भाइयों को भी दूसरी बड़ी से बड़ी जातियों की तरह सम्मान और प्रतिष्ठा से देखने का न केवल इच्छूक हूं वरन् भगवानसे प्रार्थी भी हूं। मैंने आप के लेख प्रताप में और ट्रेक्ट भी बड़े ध्यान से पढ़े हैं। मैं केवल इस परिणाम तक ही पहुंच सका हूं, कि आपको अपने इतिहास का बहुत कम ज्ञान है। इसी कारण थोड़ी सी ऊपरी बातों (कि हिन्दू अछूतों को अपना अन्य समझें व इनमें रोटी–बेटी सम्बन्ध करें) के सिवा आपको अछूतोद्धार का और कोई काम दिखाई नहीं दे रहा। इसके साथ ही आप स्वयं मान भी रहे हैं, कि हिन्दू कोई मजहब नहीं, वरन एक ऐसा समाज (सोसाइटी) है जिसकी घुटटी में ही दूसरों से घ्रणा और अपनी बड़ाई के सिवा और कुछ नहीं मिलाया गया। सब धर्म ईश्वर पूजा की शिक्षा देने और सृष्टि के साथ भलाई का उपदेश देते हैं परंतु हिन्दू एक जाति के रूप में सवर्णों को पूज्य और दूसरी सब जातियों को शूद्र म्लेक्ष व घृणा के योग्य मानते हैं। इसके रहते भी आप उनसे यह आशा रख रहे हैं, कि वे शूद्रों को अपना अंश समझे और रोटी बेटी का सम्बन्ध करें। आप कितने भोले मालूम होते हैं। क्या कभी पत्थर को भी चोटें लग सकती हैं। आप उनसे बहुत बड़ी आशाएं लगाए बैठे हैं, हालांकि हिन्दू नेता तो स्पष्ट रूप से इस बात को भी प्रकट कर रहे हैं, कि वैदिक काल का सा हिन्दू राज्य स्थापित करेंगे। इसमें सफलता की दशा में तो अछूत बेचारे सम्पूर्ण मांगते मांगते आधी से भी जायेंगे।

श्रीमान जी अपने किए का क्या इलाज? आप भाइयों ने हिन्दुओं को अब भी स्वयं ही अपने ऊपर स्वामी बना रखा है। इन्हें अपने कीमती वोट देकर बहुमत बना दिया है। अन्यथा सवर्ण हिन्दू किसी भी बड़े अल्पमत से अधिक नहीं हैं। आप स्वयं माने या न माने, अछूत हिन्दू कदापि नहीं थे, वरन् इस देश के मूल निवासी और स्वामी थे, जिन्हें आर्यों ने मार मार कर दबा लिया और प्रत्येक से नीच से नीच सेवा ली गई। यहां तक कि उन्हें मानवता के क्षेत्र से भी बहिष्कृत ठहरा कर उनका नाम स्थायी रूप से अछूत रख दिया गया और इन्हें इसी दशा पर सदैव सन्तुष्ट रखने के लिए आवागमन का सिद्धान्त गढ़ लिया। ताकि अछूत हिन्दुओं के अत्याचारों को अत्याचार न समझे वरन पिछले जन्म के कर्मों का फल मान कर अपनी बुरी दशा पर ही सन्तुष्ट रहें और सर्वण जातियों के सामने कभी सिर भी न उठा सकें। इस सच्चाई को केवल स्वर्गीय डॉ० अम्बेडकर जी ने ही अच्छी तरह समझा था और वे किसी मूल्य पर भी अछूतों के भाग्य को हिन्दुओं के साथ बांध रखने के पक्ष में नहीं थे। खेद है कि उनका जीवन समाप्त हो गया और अछूत अपने एक मात्र हमदर्द लीडर से वंचित हो गए। अब जो लीडर है – वे सब आप ही की तरह के हैं – जो चोर को मारना चाहते हैं– परन्तु चोर की मात्रा की छत्र छाया में रहने के अभिलाषी हैं। सत्तर करोड़ अछूत स्वयं एक प्रबल शक्ति हैं यदि एक करोड़ से कम संख्या के सिक्ख अपने लिए सम्मान का स्थान प्राप्त कर सकते हैं – तो सत्तर करोड़ अछूत क्यों नहीं कर सकते? यदि अछूतों में कुछ भी आत्म–सम्मान का भाव है तो वे अपना भाग्य हिन्दुओं से सम्बद्ध रखने के स्थान में उनसे अलग होकर अपना भविष्य उज्जवल बना सकते हैं – अन्यथा अछूत को और कोई उपास सफल सिद्ध नहीं हो सकता। मेरे विचार में जो अपमान सहस्त्रों वर्ष से अछूत उठा रहे है। पृथ्वी तल पर आज तक किसी जाति ने नहीं उठाया होगा। यह सब कुछ लीडरशिप की कमजोरी के प्रताप से हुआ है तो अपने वोटों को इकट्ठा करें और अपनी जाति के सच्चे समाज सेवी को ही वोट दे एकता व संगठन उत्पन्न कर के पूरी कौम को एक मंच पर इकट्ठा करने का प्रयास करें। तो कोई कारण नहीं है, कि वे अपने लिए सम्मान का स्थान प्राप्त न कर लें। वर्तमान दशा में अछूतों ने न केवल अपनी ही जाति पर अत्याचार ढा रखा है, वरन् वे एक मानवता की शत्रु जाति के अत्याचार के हाथ को लम्बा करने वाले व दूसरी अल्पसंख्यक जातियो पर भी उत्पीड़न व अत्याचार के जिम्मेदार ठहरते हैं। परन्तु जब तक अछूत अपनी दशा को बदलने के लिए कर्वट नहीं बदलेंगे तब तक न केवल आप ही अत्याचार पीड़ित रहेंगे वरन् इनके कारण दूसरी अल्पसंख्यक जातियां भी अत्याचार का शिकार बनी रहेंगी और कभी सुख की सांस न ले सकेंगी। सब मेरे प्यारे भाइयों खुदा के लिए अपनी हैसियत बनाओं और न केवल स्वयं अपने ऊपर दया करो। वरन् दूसरों पर भी दया होने दो। खुदा करे, कि मेरी वह सरासय हमदर्दी व नेक–नियती से लिखी गई कुछ प्रार्थनाएं मेरे अछूत नाइयों के काम आएं व शायद इसी से मेरी जो मुक्तिहो जाए यदि कष्ट करके अछूत नेताओं ने पते भेजे–तो मैं उनकी सेवा में भी यही विनती प्रस्तुत करूंगा।

आप का सेवकः –

अब्दुल अजीम कादियां (पंजाब)

श्री अब्दुल अजीम की अछूतों के प्रति समवेदना सराहनीय है। परन्तु कदाचित उन्हे पता नही, कि जन्ममूलक ऊंच नीच का दुर्भाव हिन्दुओं में इतना गहरा घर कर बैठा है, कि किसी हिन्दू के मुसलमान हो जाने पर भी वह पूरी तरह दूर नहीं होता। कोई सैयद किसी भङ्गी या चमार मुसलमान को लड़की देता नहीं देखा जाता मुझे मोआ से पत्र आया कि वहां ब्राह्मण से इसाई बने व्यक्ति को ही गिरजे का पादरी बनाया जाता है भङ्गी से ईसाई बने व्यक्ति को पादरी नहीं बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त एक और बुरी बात भी है। जो हिन्दू मुसलमान हो जाता है, वह भारत की भाषा, भारत की भूमि और भारत के महापुरूषों से प्रेम करना छोड़ देता है। वह दोनों शब्दों का अर्थ एक ही होने पर भी अपना नाम अजय कुमार न रखकर अब्दुल अजीम रखता है। वह गंगा और यमुना की धरती से प्रेम तोड़कर अरब की मरुभूमि को अपनी मातृ भूमि समझने लगता है। वह गौतम बुद्ध, अर्जुन और भीम को अपना महापुरूष न मानकर दाऊद, सुलेमान व रुस्तम जैसे विदेशी लोगों को ही अपना पूर्वज समझ कर पूजने लगता है। यह बात राष्ट्रीय एकता के लिए हानि कारक है। अन्यथा कोई व्यक्ति घर में कुरान पढ़े नमाज पढ़े इज्जील पढ़े, गीता पढ़े, धम्मपद पढ़े, साकारवादी हो, निराकारवादी हो, मांसाहारी हो या शाकाहारी हो, राष्ट्र हित की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं पड़ता। हां इन सब भारतवासियों का आपस मे गुण कर्म और रुचि के अनुसार रोटी बेटी का व्यवहार होना आवश्यक है। हिन्दुओं में भूमि पूजक हैं और निरामिष भोजी है तो मुसलमानों में भी कब्र पूजको और शाकाहारियों का अभाव नहीं है। काश्मीर के शिआ मुसलमान किसी हिन्दू के हाथ का नहीं खाते, इस्लाम को समता और बन्धुता, ईसाइयत के प्रेम और सेवाभाव सब हिन्दुओं के लिए ग्रहण करने योग्य हैं। हिन्दुओं की धार्मिक उदारता विश्वास के स्थान में आचार का महत्व सामाजिक शान्ति के मुसलमानों की साम्प्रदायिक संकीर्णता व असहिष्णुता से कहीं अधिक लांछनीय है। हमें किसी साम्प्रदायिक दृष्टि से नहीं, वरन मानवता की दृष्टि से ही अस्पृशता और उसकी जननी जांत पांत को समाप्त करना है।

अछूतपन की जननी जांत पांत है। जब तक जांत पांत को जड़ से नहीं उखाड़ा जाता, तब तक अछूतपन दूर नहीं हो सकता जो लोग कहा करते हैं, कि अछूतों की आर्थिक दशा में उन्नति कर देने से अछूतपन दूर हो जायेगा, उनसे मेरा कहना है, कि अछूतों को लिखा पढ़ा कर सरकार नौकरी देना संभव नहीं। जो भंगी या चमार सरकारी नौकर नहीं बन सकता, वह अपनी आर्थिक दशा में कैसे उन्नति कर सकेगा? कोई भंगी जाति का व्यक्ति हलवाई, पन्सारी, नानबाई व अचार आदि की दुकान खोलकर धन नहीं कमा सकता क्योंकि कोई भी हिन्दू उसकी दुकान से सौदा नहीं खरीदेगा। सुना है कि गढ़वाल जैसे कई प्रदेशों में जब कोई अछूत जाति का मनुष्य किसी होटल में खाना खाता है– तो उसे अपने जूठे बर्तन आप साफ करने पड़ते हैं – परन्तु जब वह मुसलमान या ईसाई बन जाता है – तब होटल वाला उसके जूठे बर्तन आप साफ करने लगता है। ऐसी दशा में कौन आत्म सम्मानी अछूत हिन्दू रहना पसन्द कर सकता है।

जो लोग पुनर्जन्म के आध्यात्मिक सिद्धान्त की आड़ लेकर कहते हैं, कि अछूत अपने पूर्व जन्म के कुकर्मो के कारण नीच जातियों में उत्पन्न हुए है और अछूतोंद्वार ईश्वर के काम से रूकावट डाल कर पाप करना है। वे आवागमन के सिद्धान्त को समझते ही नहीं। उनसे कोई पूछे, तुम जब बीमार होते हो–तो इलाज करके ईश्वरीय दण्ड से बचने की चेष्टा क्यों करते हो, तुम्हें ईश्वर ने अंग्रेजों का दास बनाया था, तुम दरिद्र परिवार में उत्पन्न हुए थे, तुमने स्वतन्त्र या धनवान बनाने की कुचेष्टा क्यों की। तुम अपने भाग्य पर सन्तुष्ट क्यों नहीं बैठे रहे। दुःखियों के दुःख को दूर करना, गिरे हुओं को उठा कर गले लगाना यही सच्ची प्रभु भक्ति है। अपने को ऊंचा और पवित्र मानना और अपने जैसे दूसरे मनुष्य प्राणियों को नीच और पशु से भी बुरा समझना महापाप है। इसी महापाप का दण्ड हिन्दू सहस्त्रों वर्षों से भोगते आ रहे हैं। संसार के और किसी भाग में इस प्रचार का अछूतपन नहीं। क्या भगवान ने भारत को ही अछूतों का जेलखाना बनाया है। दुःख की बात यह है, कि जन्म मूलक ऊंच नीच और अछूतपन की भावना केवल सवर्ण हिन्दूओं में ही नहीं यह स्वयं तथाकथित अछूतों और शूद्रों के रक्त में बुरी तरह समाई है। कोई चमार किसी भङ्गी को अपनी बेटी नहीं देगा। कोई बढ़ई किसी नाई के साथ बेटी व्यवहार नहीं करता। इसका कारण कदाचित यह है, कि चमार डरता है, कि मुझे तो पहले ही नीच समझा जाता है। भङ्गी के साथ बेटी व्यवहार करने से हिन्दू समाज की दृष्टि में मैं और गिर जाऊंगा। यदि सवर्ण हिन्दू पहले आपस में ही बेटी व्यवहार आरम्भ करें, तो शूद्रों का भी यह डर दूर हो जाये। यहां तो अवस्था यह है, कि यदि मालवीय ब्राह्मण मालवीय की छोड़ कर किसी दूसरे ब्राह्मण के साथ भी बेटी व्यवहार करता है – तो मालवी ब्राह्मण उसका बहिष्कार का उसे जाति से बाहर निकाल देते हैं।

ब्राह्मणोंको कट्टर जातिवादी समझा जाता है परन्तु हर्ष और संतोष की बात है– कि स्वयं इन ब्राह्मणों में ही ऐसे साहसी जांत पांत तोड़क व्यक्ति प्रकट हो रहे हैं। जिनकी टक्कर का सुधारक दूसरी जातियों में नहीं मिलता। अनेक ब्राह्मण सुशिक्षित लड़कियों ने चमार युवकों के साथ विवाह किया है। विजय बाड़ा (आंध्र) के प्रसिद्ध प्रोफेसर श्री रामचन्द्र राव औरा ने अपनी पत्री और पुत्र दोनों का विवाह अछूतों में किया है। वे उच्च कोटि के ब्राह्मण हैं। मेरे अनेक ऐसे सुशिक्षित ब्राह्मण युवक प्रेमी हैं– जो जांत पांत को बिल्कुल तिलाञ्जलि दे चुके हैं। बेरेहना इलाहाबाद के श्री त्रिभुवननाथ मंजुल एम० ए० और नेवादा कालोनी, इलाहाबाद के श्री राव मिश्र एम० ए० ऐसे ही दो नवयुवक हैं। अतः हताश होने की आवश्यकता नहीं। जैसा कि समझा जाता है, कि यदि जांत–पांत ब्राह्मणों ने फैलाई है तो उनका नाश भी वही करने लगे हैं। श्री राजगोपाल ब्राह्मण हैं – उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह महात्मा गांधी के पुत्र (बनिया) के साथ किया था। हमारे जांत पांत तोड़क मण्डल के प्रचार मंत्री स्वर्गीय भूमानन्द जी जन्म के ब्राह्मण थे – परन्तु उन्होंने आत्मीय जजों के विरोध की परवाह न करके ब्राह्मण लड़की से सगाई तोड़ कर एक अरोड़ा लड़की से विवाह किया था। स्वर्गीय पूज्य भाई परमानन्द जी मोहिगाल ब्राह्मण थे परन्तु उन्होंने हमारे मण्डल के प्रभाव के रूप में अपनी पुत्री का विवाह एक खत्री लड़के साथ किया था।

सच्चाई वह है, कि जांत पांत या वर्ण–व्यवस्था हिन्दू धर्म का अंग नहीं। यह हिन्दू धर्म के पीछे से छुपी हुई एक बुराई है।

देखिये महाभारत कहता है।

एकवर्णभिदं पूर्व विश्वमासीद् युधिष्ठिर।
कर्मकियानिवेदेन चातुर्वर्ण्य प्रतिष्ठितम्।।

अर्थात हे युधिष्ठिर, इस जगत में पहले एक ही वर्ष था। गुणकर्म के विभाग से पीछे चार वर्ण बनाए गए। वहीं महाभारत फिर कहता है –

न विशेषोअस्ति व र्माना सर्व ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्राह्मणा पूर्वसृष्टं हिं कर्मभिर्वथंता गतम्।।

अर्थात् वंशों में कोई भी वर्ण विशेषता नहीं रखता–क्योंकि यह सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म मय है। पहले सब्र को ब्रह्मा ने ही उत्पन्न वायु पुराण कहता है –

सत् युग में वर्णभेद, कर्म–भेद और श्राम–भेद न था। त्रेता युग में मनुष्यों की प्रकृतियाँ कुछ भिन्न भिन्न होने लगी। कर्म, वर्ण व आश्रम के भेद आरम्भ हुए। तदनुसार, शान्त, शुष्मी, कर्मी और दुःखी ऐसे नाम पड़े। द्वापर और कलि में प्रकृति के भेद और भी अभिव्यक्ति हुए। तदनुसार ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र नाम पड़े।

जो लोग चार वर्णों की बांट को ईश्वर–कृत मान कर जांत पांत से चिपटे हुए हैं– वे विष्णु पुराण (अंश 4–1–8) देखें, क्या कहती है। वहीं साफ लिखा है, कि ग्रत्समद के पुत्र शौनक ने चातुर्वर्ण्य व्यवस्था प्रचलित की।

आज के हिन्दू समाज में विभिन्न वर्णों और जातियों के लोग परस्पर रोटी–बेटी का व्यवहार नहीं करते। इससे उनका धर्म डूब जाता है और उनकी जाति चली जाती है। उस पुरातन काल में ऐसी बात न थी व्यवसाय के कारण विभिन्न नामों से पुकारे जाने पर भी वे आपस में बेटी व्यवहार करते थे। यह बात नहीं, कि ऊंचे वर्ण का पुरूष नीच वर्ण की स्त्री के साथ विवाह कर सकता था– वरन् नीच वर्ण का पुरूष भी उच्च वर्ण की स्त्री के साथ भी विवाह करता था। प्रमता ब्राह्मणी का विवाह एक नाई के साथ हुआ। इसके पुत्र मातङ्ग महामुनि थे– (महाभारत अनुशासन एवं अध्याय 22) इसी प्रकार कदम ऋषि को कन्या अरून्धती और वेश्या के पुत्र वशिष्ठ मुनि का विवाह हुआ। इनके पुत्र का नाम शक्ति था, इसका विवाह चण्डाल कन्या अदृश्यन्ती से हुआ, इनका पुत्र पाराशर था– (लिंगपुराण पूर्वाद्ध अभ्यास 63 और शिवपुराण पूवार्द्ध खण्ड 1, अध्याय 13) वर्ण व्यवस्था आज के समाजवाद और साम्यवाद की तरह सामाजिक प्रयोग था–जो बहुत बुरी तरह असफल रहा। तथाकथित अछूतों और शूद्रों का तो जीवन दूभर कर रखा ही है– इसने नारी जाति को भी अपमानित कर दिया है। बिरादरी में एक योग्य लड़का होता है। सभी उसे लड़की देना चाहते हैं। इससे लड़के का मिजाज बिगड़ जाता है। यदि देखकर इन्कार कर दिया जाता है– तो लड़की पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। लड़का वाला लड़की के पिता से भारी दहेज मांगता है, जिस मनुष्य की पांच छः कन्याएं हों – वह प्रत्येक के विवाह पर जिस 10–10, 15–15 सहस्त्र रूपया कहां से खर्च करें। जाति बन्धन न हो तो किसी भी दूसरी जाति के योग्य लड़के से विवाह किया जा सकता है। इसी जाति बन्धन के कारण अनेक पढ़ी लिखी व सुशील कन्याएं जाति के भीतर आयोग्य व दुःशील लड़कों के हाथ सौंप दी जाती है। इससे इसका दाम्पत्य जीवन दुःखमय हो जाता है। कई लड़कियां आत्म हत्या कर लेती वा विधमियों के साथ भागने पर विवश हो जाती हैं। यदि अन्तरजातीय और अन्तर प्रान्तीय विवाह हों–तो भाषा और प्रान्त का भेद मिट कर एक सुदृढ़ भारतीय राष्ट्र बचने में भी बड़ी सहायता मिल सकती है।

पाश्चात्य देशों में भी भङ्गी, चमार, बढ़ई, नाई, कुम्हार, सुनार व जुलाहा आदि का काम करने वाले लोग हैं–पर वहां ऊंच नीच का कोई भेद–भाव नहीं है। सब लोग अपनी रूचि और स्थिति के अनुसार आपस में बेटी का व्यवहार करते हैं। क्या वहां हिन्दुओं से कम विद्वान, योद्धा, राजनीतिक, वैज्ञानिक और शिल्पी है। रक्त की पवित्रता की झूठी डीग हिन्दुओं को ले डूबी है। समय के अनुसार अपने को बदलने में ही बुद्धिमता है– अन्यथा जांत पांत जैसी युगव ह्य कुरीतियों से निपटे रहने से हिन्दू धीरे–धीरे संसार से लुप्त हो जायेंगे और अनेकों पाकिस्तान और नागालैण्ड बनने की नौबत आ जायेगी।

जांत पांत का विष संप्रदाय और प्रांत जो भी पार करके दूर तक पहुंच गया है। पंजाब का आर्य समाजी खत्री किसी दूसरे सिक्ख खत्री को या मध्य प्रदेश में बसने वाले सनातन धर्मों खत्री की ही लड़की देगा। परन्तु पंजाब में बसने वाले आर्य समाजी बनिये को नहीं देगा– चाहे वह कितना ही योग्य क्यों न हो। इसका दुष्परिणाम कर वम्फील्ड फूलर के शब्दों में यह हुआ है कि हिन्दुओं की जितनी जातियां और उपजातियां हैं– भारत में उतने ही भिन्न–भिन्न राष्ट्र है। खान पान और ब्याह शादी की दृष्टि से इनका आपस में उतना भी सम्बन्ध नहीं–जितना चिड़िया घर के पशु–पक्षियों का होता है। राष्ट्रीय एकता और संगठन का आधार बन्धुता और स्वतन्त्रता होता है। जांत पांत की भावना इन तीनों को नष्ट कर देती है। एक ब्राह्मण को जितना दूसरा ब्राह्मण प्रिय और अपना लगता है उतना कोई कायस्थ या कहार नहीं क्योंकि वह उनके साथ रोटी–बेटी व्यवहार नहीं कर सकता। इसलिए जांत पांत को बनाये रखकर एक सुदृढ़ भारतीय राष्ट्र का स्वप्न देखना मूर्खों के स्वर्ग में विचरने के समान है। जांत पांत की महाव्याधि से हिन्दूओं को जितने शीघ्र छुटकारा मिले– उतना ही भारत भूमि के लिए अच्छा है।

तथाकथित उच्च वर्ण के कुछ दूरदर्शी और जन्माभिमानी लोग यूरोप और अमेरिका आदि संसार के दूसरे देशों को न देख कर कहा करते हैं कि हिन्दुओं के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र वर्ण गाय, भैस सिंह और गीदड़ जैसी भिन्न भिन्न जातियाँ हैं और विद्वान, शूर वीर वीर व ऊंचे चरित्र वाले व्यक्ति केवल ऊंचे वर्ण कहलाने वालों में ही पैदा हो सकते हैं– और कि शूद्र जाति कोई महापुरूष उत्पन्न कर ही नहीं सकता। उनकी इस भ्रांति को दूर करने के लिए कुंकीली (गोवा प्रदेश के प्रोफेसर श्री रामप्रसाद सैनी के ''हिन्दू देश'' के मई 1967 ई० के अंक में प्रकाशित लेख से लेकर कुछ ऐतिहासिक घटनाएं उदधृत की जाती हैं। वे लिखते हैं

इसमें कोई संदेह नहीं, कि आज की कोहरी, काछी, पासी, चमार, कुम्हार, नाई, तेली, कहार, सुनार, बढ़ई, लोहार, अहीर, कुर्मी, सैनी, माली, कलवार, दुसाध, नट, भग्गी व बन्जारा जातियां भले ही आज कितनी ही बिगड़ गई हों परन्तु भारतीय संस्कृति, कला, वस्तुकला, दर्शन व भाषा लिपि के आदिम निर्माता ये ही लोग हैं।

भारत के आदि कवि कौन थे? रामायण के निर्माता बाल्मीकि निषाद या चाण्डाल और महाभारत के निर्माता व्यास मल्लाहिन के पेट से पैदा हुये थे कालिदास जाति के अहीर थे – जिनको ब्राह्मणों ने बाद को ब्राह्मण घोषित कर दिया। संस्कृत के व्याकरण के रचयिता वाणिन जाति के बनिए थे। ऋग्वेद में पणि नाम की अनार्य बनिया जाति का वर्णन मिलता है। उसी जाति से ये सम्बन्धित थे,

आचार्य चाणक्य, जिनका नाम विष्णगुप्त कौटिल्य था– जाति के हलवाई या भड़भूंजा थे। चण (चना) सम्बन्धी कार्य करने के कारण उनका नाम चाणक्य पड़ गया। ब्राह्मणों ने द्वेष से उनका नाम कौटिल्य (टेढ़ा या वक्र) रख दिया। यही था– जो चन्द्रगुप्त जैसे शूद्र का मन्त्रित्व स्वीकार किया। वे स्वयम बहुत काले, कुरूप और कोणी थे। शाकाहारी होने कारण उनका नन्द से झगड़ा हो गया था, शायद चाणक्य ने अपनी मित्रता को ध्यान में रख कर अपने को ब्राह्मण कहलाना चाहा इसलिए उनको नन्द के दरवारियों के हाथों अपमानित होना पड़ा हो।

रामायण के निर्माता बाल्मीक को ब्राह्मणों ने डाकू घोषित किया। आज पूरे देश में भङ्गी समाज अपने नाम के साथ बाल्मीक लगाना गौरव समझता है और बाल्मीक जयन्ती प्रति वर्ष शान के साथ उनकी स्मृति को बनाए रखने के लिए मनाई जाती है।

जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया–तो अम्मी और शशि गुप्त जैसे लोग राज्य सत्ता के लालच में अपनी मातृ भूमि के साथ द्रोह कर रहे थे और साधारण जनता स्वतन्त्रता के नाम पर मिट रही थी। क्षत्रिय राजा अपने स्वार्थ के लिए सिकन्दर से मिल गये। किन्तु हिन्दू धर्म द्वारा अपमानित शूद्रों, जिन्होंने हथियार बन्द होना शुरू कर दिया था और अन्य निकृष्ट धर्म संघो ने सिकन्दर का सामना किया। अश्वको बहूकों, मालवा, कड़ो, शित्रि अर्जुनामन और आयुवजीवी जातियों ने जिनको हीन समझा जाता था– पग पग पर सिकन्दर का प्रतिरोध किया तारीफ यह कि ये गण–राज्य जो जन साधारण की सहमति पर चलते थे। उनको कट्टरपन्थी लोग नष्टकर्म और वर्जनीय कहते थे।

सिकन्दर को भारत में भ्रष्ट धर्म और वर्जनीय समझे जाने वाले गणों से जो सामना करना ही पड़ा इसके अतिरिक्त नन्द की सेनायें उसका सामना करने को तैयार खड़ी थी। यह नन्द कौन था? शूद्र था। सच पूछा जाय तो भारत को एकता और भारतीय इतिहास का पहला सम्राट नन्द ही था, जिसने भारत की शक्ति को बढ़ाया और सिकन्दर को लौटने पर विवश किया। पुराणों में नन्द को द्वितीय परशुराम भार्गव कहा गया है जो पृथ्वी पर सब क्षत्रियों का अन्त करने वाला होगा और समस्त भूमि को एक क्षेत्र के अधिकार में करेगा। मन्द जाति के नाई थे। नन्दी की जाति ही सम्भवतः उनके जैन धर्म के प्रति झुकाव का कारण थी। नन्द राजाओं के सब मन्त्री जी जैन थे। क्योंकि ब्राह्मण धर्म में शूद्रों के लिए कोई स्थान नहीं। यदि नन्द न होता–तो सिकन्दर की सेनाएं पटना तक रौंदती चली जाती। ब्राह्मणों ग्रन्थों ने इस अच्छाई का तो वर्णन किया ही नहीं–वरन शूद्र होने के नाते इसकी बड़ी निन्दा की। उसके राज्य में विद्रोह को भड़काया। महापदम नन्द कितनी सी छोटी जाति का क्यों न हो– इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि वह योग्य मनुष्य था। उसने एक विशाल सम्राज्य की स्थापना की। वह कोई साधारण योग्यता का मनुष्य नहीं था।

चन्द्रगुप्त मौर्य और उसके वंशराज सब नन्द वंश की देन हैं, परन्तु द्विज गज इतिहासकार उन्हें क्षत्रिय बनाने की धुन में मस्त है। कहीं यदि यह सिद्ध हो गया, कि वे शूद्र थे–तो शूद्रों में जो युगों युगों तक की प्रचारित हीनता भरी हुई है–वह समाप्त हो जायेगी और वे ऊंची जातियों के एकाधिकार के विरूद्ध उठ खड़े होंगे।

चन्द्रगुप्त से लेकर अशोक तक सब ब्राह्मणी धर्म के विरोधी हैं–क्योंकि यदि क्षत्रिय होते–तो ब्राह्मणी धर्म के अनुयायी होते–परन्तु ऐसा नहीं है। चन्द्रगुप्त जैन बना और अशोक बौद्ध बना।

ब्राह्मणों की वह विशेषता रही है, कि पहले तो विरोध करते हैं। बाद में जब विरोधी के प्रभाव की वृद्धि देखते हैं तब उसे भगवान या क्षत्रिय घोषित कर देते हैं।

महात्मा बुद्ध और श्रमणों की ब्राह्मणों ने बड़ी निन्दा की है। बाद में बुद्ध को भगवान का अवतार मान लिया। हमारा विश्वास है, कि महावीर जैन और गौतम बुद्ध दोनों ही ब्राह्मण धर्म द्वारा प्रतिपादित क्षत्रिय नहीं थे, क्षत्रिय तो वे बाद को घोषित हुए, जब उनके प्रभाव में वृद्धि हुई और राजे महाराजे सब उनको पूज्य मानने लगे। हो सकता है कि उनके अनुयायियों से उनकी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए उन्हें क्षत्रिय घोषित कर दिया हो।

व्यवसायों की बराबरी

कुछ लोग कहा कहते हैं कि चूंकि चमार, कुम्हार, लोहार बढ़ई न जुलाहा आदि का व्यवसाय घटिया है, इसलिए उसके करने वाले भी घटिया या नीच हैं। ऐसा समझना भारी भूल है। समाज के लिए सब व्यवसाय समान रूप से आवश्यक है। यदि लोहार शस्त्र न बनाए तो रण क्षेत्र में सिपाही कैसे लड़ सके? कोई मनुष्य अपने लिए आप ही जूता, कपड़ा, अनाज व बर्तन आदि नहीं बना सकता। शिल्प कला को नीच समझने पर दुष्परिणाम यह हुआ है, कि हमारा उद्योग धन्धा विदेशों की तुलना में बहुत घटिया है। जिन काम के कारण किसी व्यक्ति को नीच समझा जाता हो, उसे करने वाला उस काम को उन्नत क्यों करेगा? फिर आज जूते बेचने वाला ब्राह्मण ऊंचा समझा जाता है–परन्तु चमार जाति का सेशन जज नीच है। यह कहा तक न्याय है।

कुछ लोग कहते हैं कि अपने ही रक्त विवाह होने को रोकने के लिए आंत जांत बनाई गई है– परन्तु मैं कहता हूं कि अपने ही रक्त में विवाह करना अच्छा नहीं। विवाह जितना ही दूर कुल में हो उतना ही सन्तान की दृष्टि से अच्छा है मनु कहता है कि अपनी सात पीढ़ीया कुल छोड़कर बेटी देना चाहिए सो ठीक ही है। इन सात का ज्ञान रखना कुछ भी कठिन नहीं परन्तु एक पंजाब निवासी टण्डन जाति का खत्री ओर दूसरा कोई दो सौ वर्ष से बम्बई में बसा हुआ टण्डन है। वे यदि आपस में विवाह कर लें तो इसे एक ही रक्त में विवाह कैसे कहा जा सकता है? फिर अनेक गोत्र ऐसे भी हैं जो विभिन्न जातियो में पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ मोहिल राजपूत भी है, कुम्हार भी है और बनिए भी हैं। मल्हौ खत्री भी है और जाट भी हैं। वे सब आपस में विवाह कर लें तो प्रजनन शास्त्र की दृष्टि से कुछ भी हानि नहीं।

अच्छा यह है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य आदि के सेबिल मिटा दिए जाये। पहिचान के लिए यदि रखना आवश्यक ही हो–तो परमार पवार, तालवाड़, रत्न व गोहिल आदि पारिवारिक नाम रख लिए जायें सभी जातियों में पाए जाते हैं। इनमें शर्मा वर्मा व दास जैसे नामों से टपकने वाली ऊंच–नीच की दुर्गन्ध नहीं।

सन्तराम बी० ए०

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

वास्तविक व्याधि क्या है?

जब तक रोग के मूल कारण का ठीक ठीक पता न लग जायें तब तक उसका अथार्थ उपचार सम्भव नहीं होता। अशुद्ध उपचार से व्यधि घटने के बजाय बढ़ती जाती है। वास्तविक व्याधि है जांत पांत।

जांति पांति मिटाने व अछूतों की तरक्की के उपाय

1. कोई महानतम शाक्तिशाली मनुष्य डिक्टेटर बन कर अपनी राजसत्ता के बल से बल पूर्वक नष्ट दे। या

1. जांत पांत तोड़कर विवाह करने वाले जोड़ों और उनकी सन्तान को सरकारी नौकरियों में प्राथमिकता दी जाए। ऐसे विवाहों में एक वर्ग (अर्थात पुरुष या स्त्री) अछूत जरूर हो।

2. स्कूलो और कालेजों की पाठ्य पुस्तकों में जांत पांत के विरूद्ध पाठ दिये जायें।

3. लोग अपने को ब्राह्मण, क्षत्रिय, सवर्ण व अछूत समझना छोड़ कर केवल भारतीय समझने लगे। नामों के साथ शर्मा, वर्मा, गुप्त, ठाकुर, चौधरी, लाला व पण्डित आदि जातिसूचक शब्दों का प्रयोग बन्द कर दिया जाय और जाट कालेज, कायस्थ, पाठशाला व कान्यकुन्ज विद्यालय आदि जांति पांत की संस्थाओं को न तो सरकारी अनुदान किया जाय और न इनको शिक्षा विभाग स्वीकृत ही दे।

4. भारत सरकार और राज्य सरकारें जांत पांत के विरूद्ध छोटी छोटी पुस्तकायें विभिन्न भाषाओं में लिखना और छपवा कर बहुत बड़ी संख्या में मुफ्त बांटे।

5. जांत पांत के विरूद्ध लिखी गई अच्छी अच्छी पुस्तकों पर सरकार पारतोषित दिया करे।

6. आकाशवाणी और जन–सम्पर्क विभाग द्वारा जांत पांत के विरूद्ध प्रचार किया जाय।

7. अदालती कागजों और स्कूलों तथा कालेजों के रजिस्ट्रों में जात का खाना निकाल दिया जाय और किसी से उनकी जात पूछना, उसकी आमदनी पूछने की तरह खराब समझा जाय।

8. कथित उच्च वर्ण की बहुत सी युवतियां और युवक ऐसे निकलें जो राष्ट्र–सेवा के भाव से अछूतों व पिछड़ी जातियों के लड़के व लड़कियों के साथ विवाह करें।

9. अछूतों और पिछड़ी जातियों को आर्थिक और शैक्षणिक दृष्टि से ऊंचा उठाने के लिए सरकार उनको विशेष सहायता और सुविधा प्रदान करे – जिससे उनके और कथित ऊंची जातियों के बीच विषमता समाप्त होकर आपस में शादी विवाह का होना आसान हो जाय।

10. स्थान 2 पर ऐसे पारिवारिक सम्मेलन किये जाएं, जिनमें जांत पांत तोड़कर नर नारी जांत पांत को तोड़कर विवाह करने के इच्छुक युवक और युवतियां इकट्ठे हुआ करें। इससे एक दूसरे को देखकर उनका जांत पांत तोड़ने का उत्साह बढ़ेगा और लोगों पर जांत पांत तोड़ने का जो भय बैठा हुआ है, वह दूर हो जाएगा।

11. ब्रह्मणवादी ऊँच नीच की भावना अछूतों में भी है। चमार भङ्गी को नीच और अपने को ऊँच समझता है। अतः अछूतों को चाहिए कि वे किसी को भी नीच न समझे।

12. ब्राह्मणवादी पुनर्जन्म व भाग्यवादी झूठी विश्वास से अछूत अपने आपको खुद मुक्त करें– सम्पूर्ण संसार पदार्थ व शक्ति के बल पर चल रहा है। इस सिद्धांत को भली प्रकार समझ कर पुनर्जन्म व भाग्यवाद से शीघ्र छुटकारा प्राप्त करें।

13. अछूतों को अपनी कुप्रथाओं दहेज प्रथा, शराब खोरी, निठल्ला पन ज्यादा मेहमानी खाना जांत पांत के विचार में चिपके रहना अपने को नीच समझना जातीय पंचायतों के बन्धनों में स्वयं को बंधाकर अपना शोषण चौधरियों से करवाना बाल विवाह व चमत्कार (झाड़ाफूंसी, जादू टोना, नऊते, भगतों व पुजारियों) पर विश्वास करना आदि त्याग दें।

14. अछूतों में जो यह विश्वास है कि भगवान ने मुझे नीच व गरीब बनाया है। भगवान कलंकी अवतार लेकर जातीय छुटप्पन को नष्ट कर देंगे व मुझे मालदार बना देंगे। विश्वास को त्याग कर अपनी अक्ल व अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपनी दशा सुधारने खुद लग जाना चाहिए।

15. कर्म काण्डों में अछूत लोग सादगी बरतें। बरात में मेहमानों की ज्यादा भीड़ भाड़ न हो। तेरहीं आदि कतई नहीं कराई जावे। त्योहार बुद्धिवादी हो। हर प्रकार की फिजूल खर्ची बन्द करें।

16. सरकार की मौजूदा शिक्षा प्रणाली संविधान विरोध है। ऊंच नींच भगवान व पुनर्जन्म का प्रचार स्कूली किताबों द्वारा करती हैं। जिसका बुरा असर अल्हड़ बच्चों पर पड़ता है। सरकार को चाहिए, कि सम्पूर्ण भारत की स्कूली किताबें एक समान रखे–जिसमें राष्ट्रीय एकता व राष्ट्रीय सम्मान की शिक्षा के साथ साथ राष्ट्रीयता नागरिकता भूगोल, अर्थमेटिक व वर्तमान वैज्ञानिक उपलब्धियों की शिक्षा दी जावे फलस्वरूप भाषा भाषी प्रांतों की मांग खुद ही समाप्त हो जायेगी।

17. भारत के संविधान में संशोधन करके शिक्षा को केन्द्रिय विषय बना कर सम्पूर्ण देश की एकता के लिए एक सी राष्ट्रीय शिक्षा दी जावे हर स्तर की शिक्षा में मानव मानव की बराबरी का मानवीय सिद्धान्त अपनाया जाये।

18. वर्तमान शिक्षा प्रणाली शिक्षा समाप्त की जाये।

19. अछूतों के लिये कक्षा दस तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा करा दी जाये।

20. छुआ छूत फैलाने वाले अध्यापक व विद्यार्थी दण्डित किये जायें।

21. स्कूली किताबों में मेहनती व्यक्तियों को सम्मान की दृष्टि से और इसके विपरीत आलसी, निठल्ले व हराम खोरों की खराब निगाह से देखा जाये। ऐसे पाठ पढ़ाये जावें।

22. बिना मकान वाले अछूतों के लिए सरकार खुद क्वार्टर नुमा मकान बनवावें। उनसे तीन वर्ष में किराये के जरिये कुल खर्च वसूल कर ले।

23. अछूतों के मुहल्लों में चौथाई हार्स पावर से लेकर 20 हार्स पावर तक के मोटर सरकार द्वारा लगाये जाकर गृह उद्योगों को बढ़ावा दिया जाये और इनका सब माल सरकार खरीद कर खुद बेंचने की व्यवस्था करें।

24. पाखाना उठाने वाले व नाली साफ करने वाले तथा ऐसे गन्दे काम करने वालों की तनख्याहें डिप्टी कलेक्टर के बराबर रखी जाये ताकि ऐसे काम करने वालों को कोई नीच न समझे या ऐसे काम मशीनों द्वारा कराये जावें। ऐसे काम जाति गत भन्गी आदि से कतई न कराये जावे।

25. अछूतों के लिए इन्टरव्यू में कालेज व यूनिवर्सिटी की डिगरी काफी है। शिवटेबिल शब्द सरकार द्वारा हटा दिये जावे।

अत्त दीपों भवः

अर्थ – अछूत लोग खुद अपना दीपक बने अर्थात अपने दिमाग से जो काम कर सकते हैं, करके अपनी तरक्की करे। जैसे बने तैसे ऊंची से ऊंची शिक्षा प्राप्त करें।

दि० 1.9.73 ई० — पैरियर ललईसिंह अध्यक्ष
झींझक 209302 — डा० अम्बेडकर साहित्य परिषद
(कानपुर) — (रजिस्टर्ड)

।। विविध सम्मतियां ।।

सामाजिक एवं आर्थिक विषमता, कुरीतियां, बाल विवाह, जांति पांत, ऊंच नीच, अन्धविश्वास, कूपमण्डूकता व मूढ़ता आदि बुराइयों को समाप्त करने के लिए सब से पहिले जरूरी है, कि वर्णाव्यवस्था समाप्त की जाये। संविधान तथा अन्य कानूनों का सख्ती के साथ पालन करने से वर्ण विहीन समाज कायम हो जायेगा।

डा० बी० आर जाटव एम.ए.पी.एच.डी.।

जब तक जांति पांत का नामोनिशान मिटा नहीं दिया जाता तब तक भारत वर्ष संसार के सभ्य राष्ट्रों में अपना उचित स्थान नहीं ले सकता। पण्डित मोती लाल नेहरू

भारत वर्ष में जांत पांत का प्राचीन काल में चाहे कितनी उपयोगी क्यों न रही हो–परन्तु इस समय सब प्रकार की उन्नति के मार्ग में यह बड़ी भारी बाधा और रूकावट बन रही है।

हमें इसको जड़ से उखाड़ कर अपनी सामाजिक रचना एक दूसरे ढ़ग से करनी होगी।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

सामाजिक व आर्थिक विषमता को समाप्त करने के लिए इसको ब्राह्मणवाद को समूल नष्ट कर के अर्जक संस्कृति अर्थात कमेरे लोगों की संस्कृति अपनाई जावे। परिश्रम की श्रेष्ठता का प्रचार किया जावे।

अछूतों में शिक्षा के प्रति विशेष उदासीनता हैं–उन्हें इस उदासीनता को त्याग कर ऊंची से ऊंची शिक्षा प्राप्त करके अपनी स्वतः तरक्की करना चाहिये।

रामस्वरूप वर्मा, संस्थापक अर्जक संग

सामाजिक अपमान गरीबी से अधिक खटकता है।

पैरियर ललई सिंह

साभार :
सामाजिक विषमता कैसे समाप्त हो?
पेज संख्या 1 से 28 तक
पैरियर ललई सिंह

बहुजन नायक मान्यवर कांशीराम जी के कुछ प्रेरक विचार ....

तमन्ना सच्ची है, तो रास्ते मिल जाते हैं।
तमन्ना झूठी है, तो बहाने मिल जाते हैं।।
जिसकी जरूरत है रास्ते उसी को खोजने होंगे।
निर्धनों का धन उनका अपना संगठन है।

चाहने वालों की चाहत को पूरा करने के लिए, चाहने वालों को ही साधन खोजने होंगे। छोटे साधन को बड़े पैमाने पर इस्तेमाल करके बड़े से बड़े लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

बहुजन समाज पार्टी बनाना आसान काम है, परन्तु बहुजन समाज बनाना मुश्किल काम है। मैं इस मुश्किल काम को अंजाम देने में लगा हूँ, मैंने मांगने वाले लोगों में देने की आदत डाल दी है।

अकेले एक जाति का संगठन बनाकर, उस जाति के हितों की सुरक्षा नहीं की जा सकती बल्कि छः हजार जातियों में तोड़े गये लोगों को जोड़कर भाईचारा पैदा करके बहुजन समाज बनाकर सभी जातियों के हितों की रक्षा की जा सकती है।

15 मार्च

मान्य. कांशीराम के जन्म दिन के महान अवसर पर उन्हे

हार्दिक श्रृद्धांजलि

श्रीमती उमेश्वरी देवी
पूर्व ग्राम प्रधान/सम्पादक
द्रविड़ भारत

मा. रामदीन अहिरवार
पूर्व ग्राम प्रधान/पूर्व जेल विजिटर
उ.प्र. शासन

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

साईकिल की चोरी और कांशीराम जी की तड़प : मनोहर आप्टे

पूना में गवर्मेन्ट ऑफ महाराष्ट्र के संचालक कार्यालय के सामने के पार्क में डॉ. बाबा साहब आंबेडकर की मूर्ति है। पूना के अंबेडकर मूवमेण्ट के अधिकांश कार्यकर्ता शाम को यहाँ इकट्ठा होते हैं। मूर्ति के पास एक छोटा सा ईरानी होटल है। यहाँ की चाय बहुत मशहूर है। सभी कार्यकर्ता इस चाय होते हैं। मूर्ति के पास एक छोटा सा ईरानी होटल है। यहाँ की चाय बहुत मशहूर है। सभी कार्यकर्ता इस चाय की चुस्कियाँ लेते हुए चर्चा करते हैं। आंबेडकरी आन्दोलन से संबंधित चर्चा का यह अड्डा बन गया है। आन्दोलन के सम्बन्ध में सभी खबरें यहाँ से प्राप्त होती थीं। छुट्टी के दिन कांशीराम जी और मैं हमेशा शाम को बाबासाहब की मूर्ति के पास इकट्ठा होते थे। चाय सस्ती थी इसलिए चार पांच घण्टे में चार–पांच कप चाय पी लेते थे और लगभग खाली जेब से लौटते थे।

कांशीरामजी को यह स्थान बहुत भा गया था। बाबा साहब की मूर्ति के समीप उनका मन ऊंची उड़ान भरता था। वे बहुजन समाज की मुवमेण्ट के बारे में गहराई से सोचते थे। उनकी चर्चा सुनकर कभी–कभी मुझे ऐसा लगता था कि वे बहुत बड़ी और असंभव बातें सोच रहे हैं। फिर उनका आत्मविश्वास देखकर यकीन करने पर मजबूर होना पड़ता था।

एक दिन रात के 11 बजे तक हम चर्चा करने बैठे थे। जब ईरानी अपना होटल बन्द करने लगा तो हम कार्यालय जाने के लिए बाहर आये। होटल के सामने हमने अपनी साईकिल लॉक की थी। कांशीरामजी की साईकिल को भी मैंने ही ताला लगाया था। जब हम साईकिल लेने गये तो कांशीराम जी की साईकिल अपनी जगह नहीं थी। साईकिल गायब देखकर कांशीराम जी बहुत परेशान हो गये। उनकी आँखों में पानी आ गया। परेशान होकर वे इधर–उधर ढूंढने लगे। मुझे डाँटते हुए कांशीराम जी ने कहा– ''साइकिल ऐसे कैसी रखी थी।'' मैंने चाबी बतायी। मैंने साईकिल को ताला लगाया था।

किसी ने बताया कि यहाँ से अक्सर साइकिलें चोरी हो जाती हैं, और उनका वहम ईरानी होटल के वेटर पर था। फिर क्या... कांशीरामजी ईरानी होटल के मालिक पर भड़के ''अगर साईकिल नहीं मिली तो मैं तुम सबको पुलिस थाने में बन्द करा दूँगा'' कांशीराम ने भड़ककर कहा। ईरानी होटल का मालिक भी बहस करने लगा। काफी गर्मागर्मी हो रही थी। काफी जद्दोजहद के बाद साईकिल का पता चला। साईकिल इसी होटल के किसी बैरे ने चुरायी थी पुलिस के डर से उसने साईकिल लाकर दी।

साईकिल देखकर कांशीराम जी की आँखों में खुशी के आंसू तैर गये। ऐसे लगा जैसे खोयी हुई कोई अनमोल चीज मिल गई हो! फिर भी उनका गुस्सा ठण्डा नहीं हुआ। गुस्से में बैरे की खूब पिटायी की कांशीराम नौकर को पकड़कर पुलिसथाने गये और रपट लिखकर उसे गिरफ्तार करवाया।

जब हम वापिस लौटने लगे तब मैंने पूछा... आखिर एक साईकिल के लिए इतना गुस्सा क्यों?'' ''ओह... मेरे लिये वह साईकिल लोहे का वाहन नहीं है। मेरे लिए वह मेरी मूवमेण्ट को बढ़ाने का सबसे महत्वपूर्ण साधन है । इसी साईकिल पर सवार होकर मैं बहुजन समाज की मूवमेण्ट को बनाने के लिए घूमता हूँ। साईकिल नहीं होगी तो मूवमेण्ट आगे बढ़ाने में परेशानी होगी। इसलिये मैं परेशान हो गया था। साईकिल चोरी हो गई तो मुझे ऐसे लगा जैसे मेरे प्राण निकल गये हों।'' कांशीरामजी ने अपने मन की पीड़ा को छुपाने की कोशिश करते हुए कहा। समाज के प्रति कांशीरामजी की निष्ठा देखकर मेरा मन श्रद्धा से भर आया।

साभार :
बहुजन नायक
मान्यवर कांशीराम स्मृति ग्रंथ
पेज संख्या 56
एस. एस. गौतम

रामराज्य की कल्पना अशोक के धम्म राज्य से।

संस्कृत रामायण कर्ताओं को श्रीलंका के बारे में बिल्कुल जानकारी नहीं थी। इतना ही नहीं तो लंका से जाकर वापस आया कोई आदमी उनको नहीं मिला इन लेखकों को केवल इतना ही दिखाना था कि आठ सौ मिल समुद्र पार कर वैदिक लोग बौद्धों के पहले ही लंका गये थे। इस एक ही उद्देश से प्रेरित इन ब्राह्मणों की सोच ऐसी थी, जो वनस्पति उत्तर भारत में मिलती है, वही लंका में भी होगी। जो भाषा उत्तर भारत में बोली जाती है, वही लंका में बोली जाती होगी। इसके चलते दो हजार मिल के अंदर ही रामायण घटीत हुआ। यह बतानेवाले इन लेखको के रामायण के पात्रो को कभी भाषा की अडचन नहीं आयी। बंदर, गृध, रीस, मानव, यक्ष, और राक्षसनी कि भाषा संस्कृत। जो की वह किसी की भी मातृभाषा नहीं थी फिर भी सभी की है ऐसा आभास निर्माण किया।

बुद्ध के धम्म से ब्राह्मण धर्म पुराना है इसका विस्तार समुद्र पार द्वीपों पर हुआ था ऐसी धोखेबाजी करके स्थानिय जनतापर प्रभाव डालने के लिए झूठा रामायण रचा गया। अशोक ने लंका में धम्म प्रचारक भेजने से पहले वैदिकों ने वहाँ लष्करी विजय प्राप्त किया था। ऐसी डींगे हाकने के लिए यह संस्कृत रामायण लिखा। अशोक के जन कल्याणकारी राजसत्ता की प्रशंसा सर्वत्र हो रही थी। अशोक अपनी प्रजा को संतान मानता था। संतान समझकर प्रजा की देखभाल करने से यह काफी लोकप्रिय हुआ था। (केवल ब्राह्मणों को ही अशोक नहीं चाहिए था।) बुद्ध के धम्म का पालन करके लोकप्रिय हुए अशोक से ज्यादा वैदिकों के धर्म का पालन करने वाला राम भी इतना लोकप्रिय हुआ था कि, राम ने जलसमाधी लेते ही उसके अयोध्या के सभी प्रजा ने नदी में जान दी, ऐसी घटना घटी ऐसा लिखने से अशोक के राजसत्ता के लोकप्रियता को पर्याय के तौर ब्राह्मणों ने 'रामराज्य' का चित्र रेखांकित किया। मेरे इस प्रतिपादन को सपोट डॉ. रोमीला थापर ने लिखा ग्रंथ का जो अनुवाद डॉ. शरावती शिरगांवकर ने किया है। उनके आगे दिये गये विधान से पता चलता है – 'ऐसा वैभव एवं पवित्रता का काल मतलब आदर्श राज्य यह कल्पना इस समय (अशोक) के लोगों के मन में हमेशा थी। इसमें कोई दोराय नहीं। आगे के समय में रामराजा के कल्पना में वह संपूर्णता से स्पष्ट हुई। (मूल अंग्रेजी ग्रंथ का नाम Ashok And The Decline of Moury's)

मौर्य राजकर्ताओं की हत्या करके ब्राह्मणों ने साम्राज्य हथिया लिया, तब मौर्या को नालायक ठहराने की कोशिश ब्राह्मणों ने की। यह नालायकपन नैतिकता के बारे में सिद्ध करना ब्राह्मणों को संभव नहीं था। इसलिए मौर्या को पाखंडी करार देकर उनकी बदनामी की मुहिम ब्राह्मणों ने निकाली। वेद और यज्ञ को महत्व न देने वाला, तो पाखंडी ऐसी व्याख्या ब्राह्मणों ने की।

यज्ञ में इतना सामर्थ्य था की, बांझ महिला को भी यज्ञ के प्रभाव से बच्चा पैदा होता है। यक लोगों को बताने के लिए संस्कृत रामायण में दशरथ के पुत्र कामेष्ठी यज्ञ का झूठा वर्णन किया गया। इसी प्रकार के यज्ञ महानता की झूठे वर्णन लिखकर महाभारत और अन्य पुराण उस में जोडा गया। असंभव बातें संभव करने वाले दैवी शक्ति का यज्ञ अशोक ने नकारे वैसे ही मौर्य वंश में कोई भी राजा ने इसे स्वीकारा नहीं था। ब्राह्मण लोगों के अलावा कोई भी मूलनिवासी वेदों को एवं यज्ञ को भीख भी नहीं देता था। अंधविश्वासी लोग, ब्राह्मणों ने शिफारीश करने के बाद यज्ञ करा लेते थे। पर वे वैदिक धर्म का स्वीकार किया इसलिए नहीं तो भला हो, अपने उपर का संकट टले, इच्छा पूर्ती होने इन अपदायों से। अशोक ने बली देने पर प्रतिबंध लगाने वाला कानून बनाया था। इसका सबसे ज्यादा प्रभाव यज्ञ में दिये जाने वाले पशुबली देने वालें ब्राह्मणों को पड़ा वैसे ही वामाचार करने वाले संप्रदाय पर पड़ा पर वामाचारी या तांत्रिक संप्रदाय ने अशोक को पाखंडी नहीं ठहराया। ब्राह्मणों ने मात्र अश्वासूर कहकर गालियाँ दी। (महिषासूर, नरकासूर इस चाल पर अशोक का अश्वासूर) असूर यानी राक्षस ऐसा भी अर्थ मानकर अशोक को अश्वासूर कहा जो पुराणकारों ने गाली की तरह थी। रावण को तो सीधा–सीधा 'राक्षस' गाली दी और बुद्ध को 'चोर' गाली दी। बुद्ध को चोर कौन कहता है तो स्वंय राम।

पुराणों के कल्पना के अनुसार राम सातवा अवतार, यह राम त्रेता नाम के ब्राह्मण कल्पना के युग में हुआ। बुद्ध को पुराण ने नौवा अवतार माना। वह ब्राह्मण कल्पना के कली युग का, त्रेता युग का और कली युग के सारे साल मायनस किये तो त्रेता और कली के बीच का अंतर द्वापर युग के आठ लाख चौसष्ट हजार वर्ष बाकी रहते हैं। राम बुद्ध के पहले कम से कम आठ लाख चौसष्ट हजार वर्ष पूर्व हुआ ऐसे कहा जाये तो उसे फिर बुद्ध का अर्थ चोर यह कैसे पता चला?

यहाँ पर कोई कहेगा राम देव का अवतार था, इसलिए कलीयुग में उसके बाद दस, बारह लाख वर्षों से बुद्ध जन्म लेगें यह बात राम को पता थी, तो फिर आश्रम में सीता नहीं! यह देखकर राम हैरान क्यों हुआ? उसे रावण भगा ले गया और लंका में लाकर रख दिया यह बात उसके गुजरते दिनों के जीवन की अत्यंत व्याकूल करने वाली घटना उसे क्यों पता नहीं चली? इस प्रश्न के उत्तर यही है की, रामायण बुद्ध के बाद लिखा गया। बुद्ध के बाद ईसा पूर्व 187 तक जैन, आजीवक और बौद्ध नृपती की राजसत्ता थी और ब्राह्मणों की एक भी राजसत्ता नहीं थी। तब बुद्ध को गालियाँ देने का ढ़ाँढ़स ब्राह्मणों को क्यों नहीं हुआ?

ईसा पूर्व 187 में बौद्ध नृपती बृहदरथ मौर्य की पुष्यमित्र और अग्रिमित्र शुंग इन पिता पुत्रों ने हत्या करके साम्राज्य पर कब्जा करते ही ब्राह्मणों ने बुद्ध को गाली गलौच देने का ढ़ाँढस हुआ। इसलिए शुंग काल में रचे इस रामायण का राम कहता है ''यथैव चोर तथैव बुद्ध'' (जैसा चोर वैसे बुद्ध) कहने का तात्पर्य यह है कि, बुद्ध धम्म और अशोक का धम्म राज्य इनका महत्व नष्ट करने के लिए इस संस्कृत रामायण की रचना की गयी। ऐसी रचना करने के लिए अनुकूल वातावरण ईसा पूर्व दूसरी सदी और पहली का समय ब्राह्मण राजसत्ता थी बाद में ईसा पूर्व चौथी सदी के बाद गुप्त वंश राजसत्ता में रामायण अधिक ब्राह्मण समर्थक की बना।

साभार – प्रदूषित रामायण
पृष्ठ सं. 61 से 63
श्रीकांत शेटये

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

वियना सम्मेलन (नवम्बर 1814–जून 1815)

1 मार्च 1814 को शामो की संधि (Treaty of Chaumount) के द्वारा आस्ट्रिया, प्रशा, रूस और ब्रिटेन ने नेपोलियन का पतन होने तक पारस्परिक पूर्ण सहयोग करने और उससे पृथक रूप से संधि न करने का वचन दिया था। इसके पश्चात् मित्र–राष्ट्रों की सेनाओं ने पेरिस पर अधिकार कर लिया। नेपोलियन प्रथम को सम्राट का पदत्याग कर एल्बा जाने के लिए बाध्य होना पड़ा और बूर्बा वंश के लुई 18वें को फ्रांस का सिंहासन दिया गया (6 अप्रैल 1814)। 30 मई को फ्रांस के प्रतिनिधियों एवं मित्र–राष्ट्रों के बीच पेरिस की प्रथम सन्धि हुई, जिसके अनुसार फ्रांस की सीमाएँ वहीं निश्चित की गई जो 1792 में थी।

फ्रांस के भाग्य का निर्णय करने के उपरान्त; इसी संधि के 32वें अनुच्छेद (32nd Article) के अनुसार यूरोप की पुनर्व्यवस्था करने एवं अन्य महत्वपूर्ण प्रश्नों के निर्णय के लिए वियना में एक सम्मेलन करने का निश्चय किया गया। वियना को सम्मेलन का केन्द्र बनाने के दो मुख्य कारण थे, प्रथम यह कि आस्ट्रिया ने नेपोलियन के विरुद्ध संघर्ष में प्रमुख भाग लिया था और दूसरा, यह कि वियना यूरोप के मध्य में स्थित तत्कालीन यूरोपीय सभ्यता का प्रमुख केन्द्र था।

कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन नवम्बर 1814 को आरम्भ हुआ। उसमें भाग लेने के लिए टर्की को छोड़कर यूरोप के सभी राज्यों के शासक अथवा उनके प्रतिनिधि उपस्थित हुए। इसमें आस्ट्रिया के सम्राट, रूस` जार तथा प्रशा, डेनमार्क बुर्टम्बर्ग, बवेरिया के शासक सम्मिलित हुए। इनके अतिरिक्त जर्मनी की कई छोटी रियासतों के अनेक ड्यूक, इलेक्टर एवं पोप के प्रतिनिधि भी आये। ब्रिटेन का प्रतिनिधित्व वहाँ के विदेश मंत्री केसलरे एवं ड्यूक ऑफ वेलिंगटन ने किया। फ्रांस की ओर से प्रसिद्ध कूटनीतिज्ञ तेलीराँ को भेजा गया। आस्ट्रिया के प्रधानमंत्री मेटरनिख को कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया गया एवं उसका सहयोगी गेंज सचिव नियुक्त हुआ। इसमें कुछ अन्य कुटनीतिज्ञों जैसे प्रथा के हार्डनवर्ग, रूस के विदेश मंत्री नैसलरोड एवं स्टीन जो किसी पद पर नहीं था, की उपस्थिति उल्लेखनीय थी। यद्यपि आस्ट्रिया की आर्थिक स्थिति शोचनीय थी, तथापि सम्राट फ्रांसिस प्रथम एवं प्रधानमंत्री मेटरनिख ने आमंत्रित अतिथियों को शानदार भोज और नाच–गाने के कार्यक्रमों से विभोर कर दिया।

सदस्यों की संख्या, उनके विचारों की विषमता तथा विचारणीय समस्याओं की गम्भीरता की दृष्टि से, यह कांग्रेस यूरोप के इतिहास का सबसे अधिक महत्वपूर्ण अधिवेशन था। कहा जाता है कि महाद्वीप में इसके पहले कभी भी इतने शक्तिशाली शासक एवं सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ सामूहिक महत्व के विषयों पर विचार करने के लिए एकत्र नहीं हुए थे।

काँग्रेस के प्रमुख नेता

सम्मेलन में चार बड़े विजयी राज्यों अर्थात् ब्रिटेन, आस्ट्रिया, रूस और प्रशा को प्रमुख स्थान मिला और कुछ समय पश्चात फ्रांस भी बड़े राज्यों की समिति का सदस्य बन गया। इन पाँचों के मुख्य प्रतिनिधियों एवं उनकी नीति के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

केसलरे और वेलिंगटन (इंग्लैण्ड) : सम्मेलन में ये दोनों व्यक्ति इंग्लैण्ड का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। इनमें केसलरे शान्त, निर्विकार और रूपवान व्यक्ति था। सम्मेलन में भाग लेने का इनका मुख्य उद्देश्य यूरोप में शक्ति संतुलन के सिद्धांत को पुनः स्थापित करना था। इसके सिवाय उन्हें फ्रांस और रूस की साम्राज्यवादी भावना पर भी अंकुश लगाना था। अतः वे इन दोनों उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आद्यान्त प्रयास करते रहे। फ्रांस की ओर से उठने वाले सम्भावित खतरे का सामना करने के लिए वे शक्तिवान नीदरलैण्ड, पीडमाण्ट और स्वतंत्र स्विट्जरलैण्ड राज्य की स्थापना को आवश्यक समझते थे। इसलिए वे इन्हें पूरा करने के लिए परिश्रम करते रहे। इसके सिवाय वे फ्रांस और रूस के विरूद्ध मध्य यूरोप में आस्ट्रिया और प्रशा की शक्ति के अविर्भाव को उपयोगी मानते थे। अतः उपर्युक्त बातों की पूर्ति के लिए इंग्लैण्ड के प्रतिनिधि पूर्ण रूप से सजग रहे।

अलेक्जेण्डर प्रथम (रूस) : वियना कांग्रेस में रूस का जार अलेक्जेण्डर प्रथम स्वयं उपस्थित हुआ था। उसके पास कोई ठोस योजना न थी। उसके उच्च आदर्श जो अव्यावहारिक थे, निरुपयोगी सिद्ध हुए। उसने सम्मेलन में दास–प्रथा के उन्मूलन और राष्ट्रसंघ की स्थापना विषयक प्रस्तावों का समर्थन किया।

मेटरनिख (आस्ट्रिया) : सम्मेलन का अध्यक्ष एवं आस्ट्रिया का प्रधानमंत्री मेटरनिख, उपस्थित राजनीतिज्ञों में अत्यधिक चतुर व्यक्ति था। उसका कार्य स्वार्थ भावना से प्रेरित एवं षड्यंत्रकारी था। वह अत्यन्त व्यावहारिक और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। वह अपने राज्य की विशालता में निहित विभिन्नताओं को भलीभाँति समझता था और यही कारण था कि वह जनता की स्वतंत्रता का विरोधी रहा। वह नवीन विचारों और क्रान्ति का कट्टर विरोधी था और इसीलिए वह यूरोप में क्रान्ति के पूर्व की स्थिति को स्थापित करने का पक्षपाती था, क्योंकि क्रान्ति से सबसे अधिक नुकसान आस्ट्रिया को ही उठाना पड़ा था। जन स्वातंत्र्य का विरोधी होने के कारण वह हमेशा जनता के कोप का भाजन बना रहा, परन्तु उसका वह विचार आस्ट्रियन साम्राज्य की प्रकृति के अनुरूप था। बेमेल आस्ट्रियन साम्राज्य की सुरक्षा के लिए नवीन विचारधारा का विरोध करना उसके विचार से अनिवार्य था। इसके कारण रूस के कार्यों की कटु आलोचना हुई, परन्तु इतना होते हुए भी कोई इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि वह लगभग 40 वर्षों तक अपने विचारों में यूरोपीय राजनीति को प्रभावित करता रहा।

तेलीरां (फ्रांस) : तेलीराँ पराजित राष्ट्र फ्रांस का प्रतिनिधित्व कर रहा था। उसने फ्रांस में बूर्बो–वंश की पुनः स्थापना के लिए प्रयास किया, जिसमें उसे सफलता भी मिली। इसके सिवाय अपनी सूझ–बुझ के कारण अपने फ्रांस को छीन लिए जाने से भी बचा लिया।

फ्रेडरिक विलियम तृतीय (प्रशा) : प्रशा की ओर से स्वयं वहाँ का राजा फ्रेडरिक विलियम तृतीय सम्मेलन में उपस्थित हुआ था। सम्मेलन में उसकी गतिविधियाँ महत्वहीन थी।

सम्मेलन में विचारणीय प्रश्न

नेपोलियन के व्यापक युद्धों ने यूरोप के पुराने नक्शे को बिल्कुल ही बदल दिया था, जिसके अनुसार पुराने राज्यों का अंत और उनके स्थान पर अनेक नवीन राज्यों का निर्माण हो गया था। अतः यह सम्मेलन अपने विचारों के अनुसार यूरोप का पुनर्निर्माण करना चाहता था, जिसके लिए उसे मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रश्नों पर विचार करना पड़ा –

1. फ्रांस की क्रान्ति के कारण यूरोप में उत्पन्न नवीन विचारधारा का उन्मूलन किस प्रकार किया जाय? नेपोलियन–पतन के बाद भी नवीन सिद्धान्त बड़े वेग से यूरोपीय वातावरण को उद्वेलित कर रहे थे।

2. नेपोलियन द्वारा पदच्युत राजाओं को किस प्रकार पुनः स्थापित किया जाय? साथ ही, उनके राज्यों के सीमांकन का प्रश्न भी विचारणीय था।

3. यूरोप की शांति भविष्य में फिर से भंग न हो, इस बात पर भी गम्भीरता से विचार करना था।

कार्य–प्रणाली

इस सम्मेलन की कार्य–प्रणाली बड़ी ही विचित्र थी। उपस्थित राजनीतिज्ञ अपने दायित्वों के प्रति जिम्मेदार नहीं प्रतीत हुए, क्योंकि सभी राजनीतिक विषयों के निर्णय बड़े ही अगम्भीरतापूर्ण ढंग से नाच–घरों और संगीत सम्मेलनों में किये गये। ऐसा करते समय उसके भावी परिणामों पर जरा भी विचार नहीं किया गया। इन निर्णयों का जनमत से कोई सम्बन्ध न था। यूरोप के चार प्रमुख राज्य–इंग्लैंड, रूस, आस्ट्रिया और प्रशा ने ही सक्रिय रूप से सम्मेलन के निर्णयों को प्रभावित किया। ऐसा करते समय में वे जनहित की ओर ध्यान न देकर अपने स्वार्थ साधन ही चिन्ता में ही संलग्न रहे। उक्त बड़े राष्ट्रों के समक्ष छोटे राज्यों का कोई महत्व न था। नेपोलियन की पराजय के पूर्व जिन नारों को बुलन्द किया गया था, वे सब अब विस्मृत कर दिये गये थे। इस प्रकार सम्मेलन की न तो कोई निश्चित कार्य–प्रणाली थी और न ही उपस्थित राजनीतिज्ञों का कोई निर्धारित आदर्श। सम्मेलन के ढंग को देखते हुए उससे किसी बड़ी और महत्वपूर्ण बात की आशा करना बेकार था।

कांग्रेस के आधारभूत सिद्धान्त

यूरोपीय व्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए वियना कांग्रेस के निर्णय मूलतः तीन सिद्धान्तों पर आधारित थे। प्रथम, तेलीराँ द्वारा प्रतिपादित एवं मेटरनिख द्वारा समर्थित वैधता का सिद्धान्त था। इसका अर्थ यह था कि जो शासक नेपोलियन द्वारा बलपूर्वक सिंहासनच्युत कर दिये गये थे, उन्हें वैधता अथवा न्याय के आधार पर उनके राज्य एवं अधिकार वापस मिलने चाहिये।

इसी सिद्धांत के आधार पर फ्रांस के शासक लुई अठारहवें को मान्यता प्राप्त हुई एवं स्पेन, नेपिल्स और सिसली में बूबविंशीय शासकों को पुनः प्रतिष्ठित किया गया।

दूसरा सिद्धांत, शक्ति–सन्तुलन का था। इसके मूल में यह विचार था कि नवीन प्रादेशिक व्यवस्था इस प्रकार की जाये, जिससे यूरोप का कोई भी राष्ट्र इतना शक्तिशाली न हो सके कि वह दूसरे राज्यों के लिए भय का कारण बन जाये। इसी सिद्धान्त को ध्यान में रखकर फ्रांस के चारों ओर बेल्जियम, हॉलैण्ड, प्रशा तथा साार्डीनिया के शक्तिशाली राज्य स्थापित किय गये।

यही सिद्धान्त ब्रिटेन के विदेशमंत्री केसलरे की नीति का प्रमुख अंग था।

रूस की बढ़ती हुई शक्ति पर रोक लगाने के उद्देश्य से आस्ट्रिया, फ्रांस और ब्रिटेन ने उसे सम्पूर्ण पोलैण्ड नहीं मिलने दिया। जर्मन राज्य–संघ का पुनर्गठन इस प्रकार किया गया कि प्रशा अपेक्षाकृत अधिक शक्तिशाली न बन सके और आस्ट्रिया का भी प्रभाव बना रहे।

तीसरा सिद्धान्त, विजयी राज्यों की क्षतिपूर्ति का था। जिन राज्यों ने नेपोलियन की शक्ति का अंत करने में सहयोग दिया था, वे उसके बदले में कुछ पुरस्कार की आशा रखते थे और यह भी चाहते थे कि नेपोलियन का समर्थन करने वाले राज्यों को दण्डित किया जाये। इसी सिद्धान्त के आधार पर रूस, आस्ट्रिया और प्रशा को नेपोलियन के साम्राज्य के हिस्से दिये गये।

सम्मेलन के निर्णय

फ्रांस : फ्रांस के संबंध में अन्तिम निर्णय पेरिस की द्वितीय संधि के द्वारा किया गया। फ्रांस की सीमा वही निर्धारित की गई जो 1790 ई० में थी। उसको पुर्तगाल से फ्रेंच ग्वायना, ग्वाडालोप, ब्रिटेन से मार्टिनोक एवं बूर्गा द्वीप

प्राप्त हुए। इसके साथ ही उसे 700 मिलियन फ्रांक हर्जाने के रूप में देने को कहा गया और वेलिंग्टन के नेतृत्व में मित्र राज्यों की डेढ़ लाख सेना का खर्च भी सहना पड़ा। परन्तु तेलीरॉं के कूटनीतिक प्रयासों के फलस्वरूप, वह यूरोप में अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने में सफल हुआ।

आस्ट्रिया : आस्ट्रिया ने बेल्जियम (आस्ट्रियन नीदरलैंड) पर अपना अधिकार छोड़ दिया। उसके बदले में उसे इटली में वेनेशिया, लोम्बार्डी, इलीरिया का प्रदेश डालमेशिया एवं केटेरो का बंदरगाह प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त आस्ट्रिया को बवेरिया से टाइराल और साल्जवर्ग मिला और पोलैण्ड में पूर्वी गेलेशिया प्राप्त हुआ, जबकि क्रेकाओं को 'स्वतंत्र नगर' घोषित किया गया। नवनिर्मित जर्मन संघ के संविधान के अनुसार आस्ट्रिया को जर्मन राष्ट्र–सभा का स्थाई प्रधान बनाया गया।

प्रशा ने सम्पूर्ण सेक्सनी प्राप्त करने का प्रयत्न किया था, परन्तु उसे सेक्सनी का आधा भाग ही मिल सका। साथ ही उसे वर्ग की डची और वेस्टफेलिया की डची का कुछ भाग पोसेन का प्रदेश, डेजिंग और टार्न भी प्राप्त हुआ। साथ ही राइन नदी के बायें किनारे पर एल्केन और काबलेन्ज के बीच का क्षेत्र तथा स्वीडन से पोमरेनिया का प्रदेश भी उसे दिया गया। इस प्रकार प्रशा उत्तरी जर्मनी का प्रमुख राज्य बन गया।

जर्मनी के अन्य राज्य : जर्मनी के 38 राज्यों का एक शिथिल जर्मन–संघ बनाया गया, जिसका स्थाई अध्यक्ष आस्ट्रिया था। इस संघ के संविधान के अनुसार दो सदनों वाली राष्ट्र–सभा का प्रावधान किया गया। इस संसद या राष्ट्र–सभा के सदस्य विभिन्न जर्मन शासकों के प्रतिनिध हुआ करते थे। प्रत्येक राज्य आंतरिक शासन में स्वतंत्र था, परन्तु राज्यों को आपस में युद्ध करने एवं वाह शक्तियों से युद्ध अथवा संधि करने का अधिकार नहीं था।

बवेरिया : बवेरिया को रेनिश बवेरिया दिया गया।

हनोवर : हनोवर का राज्य पुनः संगठित किया गया और उसे हिल्देशीम का भू–भाग भी प्राप्त हुआ।

इटली : सार्डीनिया के साथ पीडमाण्ट, जिनोआ एवं सेवाय को मिलाकर फ्रांस की सीमा पर एक सुदृढ़ राज्य बनाया गया।

नेपिल्स और सिसली : बूर्बावंश के फर्नीनेण्ड समय को नेपोलियन एवं सिसली का शासक बनाया गया।

पोप का राज्य : पोप पायस सप्तम को फरारा एवं बोलोना के लीगेशन सहित उसका राज्य वापिस मिल गया।

पामां : पिआकेंजा तथा गोस्टाला नेपोलियन की रानी एवं आस्ट्रिया के सम्राट की पुत्री को उसके जीवन–काल के लिए प्रदान किये गये।

टस्कनी और माडेना : दोनों ही राज्य आस्ट्रिया के राजवंश के राजकुमारों को दे दिये गये।

इस प्रकार इटली छोटे–छोटे राज्यों में बँट गया और मेटरनिख की इच्छानुसार ''एक भौगोलिक नाम मात्र'' रह गया। इटली के प्रायःद्वीप में आस्ट्रिया का प्राधान्य सुनिश्चित हो गया।

बेलजियम और हालैण्ड का संयुक्त राज्यः हालैण्ड में आरेंज वंश की पुन–र्स्थापना की गई और बेलजियम को उसके साथ मिला दिया गया। इसका मुख्य उद्देश्य फ्रांस की उत्तरी सीमा पर एक सुदृढ़ राज्य स्थापित करना था।

स्विट्जरलैण्ड : स्विट्जलैण्ड में 3 केन्टान जोड़कर 22 केन्टनों का एक संघ बनाया गया तथा उसकी तटस्थता की सभी बड़े राज्यों ने गारंटी दी।

स्वीडन : स्वीडन से फिनलैण्ड का प्रदेश लेकर रूस को और पश्चिमी पोमरेनिया का क्षेत्र प्रशा को दिया गया। इसके साथ ही डेनमार्क से नार्वे को लेकर स्वीडन को दिया गया।

रूस : पोसेन और मेलीशिया को छोड़कर शेष 'डची ऑफ वारसा' (पोलैण्ड का राज्य) रूस को दिया गया। इसके अतिरिक्त फिनलैण्ड का प्रदेश उसे स्वीडन से प्राप्त हुआ। इस व्यवस्था से रूस को पर्याप्त लाभ हुआ।

ब्रिटेन : ब्रिटेन को यूरोप में हेलीगोलेण्ड तथा माल्टा का द्वीप मिला और आयोनियन द्वीप–समूह का संरक्षण भी प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त उसे स्पेन से ट्रीनीडाड, फ्रांस से मारीशस, टोबेगो एवं सांटालूसिया तथा हालैण्ड से लंका एवं केप ऑफ गुडहोप प्राप्त हुए।

स्पेन और पुर्तगाल : स्पेन में बूबविंश को और पुर्तगाल में जॉन चर्तुथ को पुनः सिंहासनारूढ़ किया गया। स्पेन और पुर्तगाल की सीमाओं में कोई परिवर्तन नहीं किया गया।

दास व्यापार निषेध : ब्रिटेन के प्रतिनिधि केसलरे के प्रत्यन से सम्मेलन ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें विभिन्न राज्यों से आग्रह किया गया कि वह अपने–अपने राज्यों में दास–प्रथा की समाप्ति के लिए कदम उठायें।

अन्तर्राष्ट्रीय विधान का प्रयास : वियना कांग्रेस ने कुछ समस्याओं को सुलझाने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय विधान बनाने का भी प्रयास किया। विधान में युद्ध एवं शांति काल में व्यापार, बड़ी नदियों में व्यापारिक नौकाचालन के नियम तथा राज्यों के पारस्परिक संबंधों के नियम आदि थे।

वियना कांग्रेस के कार्यों की समीक्षा

वियना कांग्रेस का उद्घाटन उच्च आदर्शों एवं उद्देश्यों की घोषणाओं के साथ हुआ था, परन्तु उसके निर्णयों से लोगों को बड़ी निराशा हुई और उसकी कड़ी आलोचना की गई। सम्मेलन के सचिव गेंज ने तो यहाँ तक कह डाला कि ''इन सुन्दर वाक्यों का केवल यही उद्देश्य है, कि सर्वसाधारण की उत्तेजनाओं को शान्त किया जाये और कुछ राज्यों के पुनर्मिलन को शक्ति एवं प्रतिष्ठा दी जाय। कांग्रेस का वास्तविक उद्देश्य यह था कि विजयी देश पराजित देशों को लूट–खसोट कर आपस में बाँट लें'' परन्तु इस कथन में कुछ अतिशयोक्ति है। विजेता देशों ने फ्रांस के साथ उदाहरता का व्यवहार किया।

वियना के राजनयिकों की आलोचना मुख्यतः इस कारण की गई है कि उन्होंने लोकतन्त्र और राष्ट्रीयता की भावनाओं की पूर्ण रूप से अवहेलना की जैसा कि 'हेजन ने लिखा है कि ''वियना का सम्मेलन अभिजात वर्गीय लोगों का सम्मेलन था, वे लोग राष्ट्रीयता और जनतन्त्र के उन आदर्शों को, जिनकी फ्रांसीसी क्रांति ने घोषणा की थी, समझने में असमर्थ थे अथवा उनसे घृणा करते थे।'' उन्होंने यूरोप के मानचित्र में जो परिवर्तन किये, उसमें सम्बन्धित क्षेत्र की जनता की इच्छाओं एवं आकांक्षाओं का किसी भी प्रकार ध्यान नहीं रखा और उनके साथ बालकों जैसा व्यवहार किया (जिन्हें अपरिपक्वता तथा अनुभवहीनता के कारण अपनी बात कहने का अधिकार नहीं होता)। बेलजियम और हालैंड, जो भाषा और धर्म में एक दूसरे से भिन्न थे, संयुक्त कर दिये गये। इसी प्रकार समान भाषा और संस्कृति वाले नार्वे को डेनमार्क से पृथक कर स्वीडन से मिला दिया गया। जिनोआ को उसके प्राचीन शत्रु सेवाय के राजवंश के अधीन कर दिया गया। पोलैंड की राष्ट्रीयता की भावनाओं की अपेक्षा करके उसको पुनः विभाजित रहने दिया गया। इटली को छोटी–छोटी रियासतों में विभाजित करके उस पर आस्ट्रिया का निरंकुश शासन स्थापित कर दिया गया। फिनलैंड को रूस के अधीन रहने दिया गया।

कांग्रेस के कर्णधारों ने केवल शक्ति संतुलन एवं राजवंशीय हितों के आधार पर ही राष्ट्रीय सीमाओं को पुनः निर्धारित किया। हेजन ने लिखा है कि ''उनकी व्यवस्था वास्तव में कोई 'व्यवस्था' नहीं थी, क्योंकि उन्होंने उन्हीं तथ्यों की उपेक्षा की, जिनसे उसे स्थायी बनाया जा सकता था। 1815 के बाद यूरोप का इतिहास वियना–कांग्रेस की इस भूल को सुधारने का इतिहास है।

सम्मेलन के निर्णय दीर्घकाल तक स्थायी नहीं रह सके। हालैंड और बेलजियम का एकीकरण केवल 15 वर्ष

सेवा में,

नाम ....

पता ....

....

....

तक चला। 1870 तक इटली और जर्मनी की व्यवस्था समाप्त हो गई और दोनों का एकीकरण पूरा हो गया। नार्वे और स्वीडन का एकीकरण भी समाप्त हो गया। फ्रांसीसी क्रांति द्वारा उत्पन्न राष्ट्रीयता, स्वतन्त्रता एवं प्रजातन्त्र की भावनाओं की उपेक्षा किये जाने के कारण ही कांग्रेस के निर्णय अस्थायी सिद्ध हुए।

कुछ छोटे राज्यों को राजनीतिक अथवा वंशगत कारणों से अधिक भू–भाग देने अथवा अतिरिक्त लाभ प्रदान करने तथा कुछ के साथ दिये हुए वचनों का पालन न करने के भी उदाहरण मिलते हैं, जिससे कांग्रेस की पक्षपातपूर्ण नीति स्पष्ट होती है।

यह सत्य है कि वियना व्यवस्था में अनेक दोष थे, किन्तु उसका सही मूल्यांकन करने के लिए हमें यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिए कि जिन परिस्थितियों में उस सम्मेलन को काम करना पड़ा का उसे समाधान करना पड़ा, और जिन समस्याओं का उसे समाधान करना पड़ा, वे बड़ी जटिल थीं। युद्धकाल में विभिन्न शक्तियों के बीच कुछ संधियाँ हो चुकी थी, जिनका पालन करना आवश्यक था। बड़े राज्यों के पारस्परिक हितों के संघर्ष की स्थिति में समझौते करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। इसके अतिरिक्त डेविड टामसन का यह कथन भी विचारणीय है कि ''वियना का समझौता पुरानी परिपाटी के शासकों एवं अभिजातवर्गीय कूटनीतिज्ञों द्वारा सम्पन्न हुआ था और वह अठारहवीं सदी की विचारधारा से ओत–प्रोत था। अतः उन्नीसवीं सदी के तीव्रगति से बदले हुए संसार में उसके निर्णयों की उपयुक्तता एवं स्थायित्व बने रहने की आशा नहीं की जा सकती थी।'' वियना के राज्यनीतिज्ञों को राष्ट्रीयता एवं उदारवाद की भावनाओं के महत्व को न समझने के लिए दोषी ठहराना अनुचित होगा, क्योंकि 1815 में बहुत कम लोग उनका महत्व समझते थे।

ग्रांट तथा टेम्परले ने लिखा है ''विनया के शांति संस्थापकों को अत्यन्त प्रतिक्रियावादी और अनुदार कहकर उनकी निन्दा करना एक परिपाटी बन गयी है। यह सत्य है कि वे पुरानी व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते थे और नये विचारों से अछूते थे, किन्तु वे पुरानी परिपाटी प्रतिनिधि के श्रेष्ठतम थे और उनकी व्यवस्था ने यूरोप को 40 वर्ष तक युद्धों से बचाये रखा।

कठिनाइयों एवं सीमाओं के बावजूद कांग्रेस कि निर्णयों के फलस्वरूप यूरोप के राज्यों के बीच सहयोग की भावना का संचार हुआ। प्रादेशिक पुनर्व्यवस्था के क्षेत्र में उसके कुछ निर्णय महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। उसके निर्णयों से ही अप्रत्यक्ष रूप से इटली और जर्मनी के एकीकरण का मार्ग प्रशस्त हो गया। कुछ राज्यों को उसने स्वतन्त्रता एवं न्यायोचित अधिकार वापस दिलाये। केटलबी के शब्दों में, उसने ऐसा आधार प्रदान किया जिस पर भविष्य के यूरोप की नींव रखी गई।' कांग्रेस का मुख्य उद्देश्य यूरोप की जनता को इस शान्ति की सबसे अधिक चाह थी। अन्त में हम प्रोफेसर फाइफ के शब्दों में कह सकते हैं कि, ''दो युगों की सीमा रेखा पर स्थित वियना का निर्णय इतिहास का एक सीमा चिन्ह है।''

साभार :
यूरोप का इतिहास (1453–1870)
पेज संख्या 223 से 233 तक
डॉ० भगवान सिंह वर्मा

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।